

प्रकाशक—

लालचन्द-कोठारी

प्रधानमंत्री

सादर राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट  
बीकानेर (हराजस्थान )

सन् १९८१

मूल्य २)

, मुद्रण —

भारत प्रिंटिंग प्रेस,  
मथुरा. ( उ प्र )

## प्रकाशकीय

श्री सादुल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के. एम. पट्टिकर महोदय की प्रेरणा से साहित्यानुयायी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादुलसिंहजी बहादुर शाह संस्कृत हिन्दी एवं निरुपेता राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वांगीण विकास के लिये की गई थी ।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का चीन्मास्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है ।

सत्वा श्राप निमत १९ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियाँ बसाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

### १. बिराल राजस्थानी हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संज्ञा लभ्यता हो नाक से अधिक शब्दों का सम्मेलन कर चुकी है । इसका सम्पादन आधुनिक कोश के ढंग पर, भविष्य के प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं । कोश में शब्द व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएँ दी गई हैं । यह एक व्यापक विद्यालय योजना है जिसकी सटीकजनक क्रियाविधि के सिद्धे प्रचुर इत्य और अर्थ की आवश्यकता है । आशय है राजस्थान सरकार की ओर से प्राचीन इत्य-साहाय्य उपलब्ध होने ही निवट बहिष्क में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना सबब हो जानेगा ।

### २. बिराल राजस्थानी मुहावरों कोश

राजस्थानी भाषा अपने विरल शब्द बंधार के साथ मुख्यतः से भी समृद्ध है । अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरों के विभिन्न प्रयोग में लाये जाते हैं । हमने लगभग दस हजार मुहावरों का हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में व्यवहारण सहित प्रयोग देकर संग्रहित करवा लिया है और सीधे ही इन प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जा रहा है । यह भी प्रचुर इत्य और अर्थ-साध्य कार्य है ।

यदि हम यह विद्यालय संघ को देखें तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी भाषा के लिए भी एक मोरच की बात होगी।

१ आधुनिक राजस्थानीकरण रचनाओं का प्र

इसके अन्तर्गत विमलितित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ कठामण्डल चतुःश्रयाः । ले भी गान्ध्याय संस्कार

२ आर्मे पन्की प्रथम सामाजिक उन्मेष । ले भी श्रीमान बोरी ।

३ बरस गाँठ, मौखिक कहानी संग्रह । ले भी मुरलीधर व्यास ।

‘राजस्थान-भारती’ में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक प्रत्यक्ष स्तम्भ है जिसमें भी राजस्थानी रचनाओं का अधिकार और रचनात्मक भाव व्यक्त है।

४ ‘राजस्थान-भारती’ का प्रकाशन

इस विद्यालय शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये मोरच की बात है। यह १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की मिश्रण के मुख्य कर्म से प्रभावित की है। बहुत बड़े हुए भी इन्सान के प्रेम की एवं अन्य कल्याणों के कारण वैसाचिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग १ भाग १-४ ‘बा० लुइस पिन्ना तैस्सिहोरी विरोधांक’ बहुत ही महत्वपूर्ण एवं अनोखी सामग्री से परिपूर्ण है। यह मात्र एक विदेशी विद्यालय की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अपना अलग भाग भी प्रकाशित होने का है। इसका भाग १-२ राजस्थानी के सर्वप्रथम महाकवि पृथ्वीराज राठीय का सचित्र और बहुत विरोधांक है। अपने अंत का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की सम्पादिका और महत्व के सम्बन्ध में इसका ही महत्त्व वर्णित होता कि इसके परिवर्तन में भारत एक विदेश से लगभग ५ वर्ष-परिवर्तन हमें प्राप्त होती है। भारत के अतिरिक्त राजस्थान देशों में भी हमकी भाषा है व इसके बाहर है। राजस्थानी के लिये ‘राजस्थान भाषा’ अतिवर्धन संघर्षीय शोध पत्रिका है। इनमें राजस्थानी भाषा साहित्य पुरातन इतिहास तथा अति १८ शताब्दी के अतिरिक्त संस्था के तीन विभिन्न तत्त्व या इतरण शर्मा श्रीमोहनराज स्वामी और श्री अरविन्द माधव की बहुत सख्त रूपी भी प्रकाशित की गई है।

५ राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वमुल्य करने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में विक्रय करने की हमारी एक निश्चल योजना है। संस्कृत हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

#### ६ पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लिये गये हैं और उनमें से सशुद्ध संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विभिन्न संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७ राजस्थान के प्रभाव कवि ज्ञान (ग्यामउक्त) की ७१ रचनाओं की शोध की गई। जिसकी सर्वप्रथम भागवती 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'ग्यामउक्ता' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८ राजस्थान के तीन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९ माण्डव सेन के १ लालगीता का संग्रह किया जा चुका है। बीरानेर एवं बीरलमेर सेन के संकलित लालगीत पुस्तक के लालगीत बाल लालगीत लोरिया और ललक ७ लोक कथाएँ सम्प्रेषित की गई हैं। राजस्थानी कहानियों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। बीरलमेर के भीत पावनी के कथाएँ और राजा बरकरी दाहि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीरानेर राज्य के और बीरलमेर के सम्प्रदायिक कवियों का विरचित संग्रह बीरानेर तीन लेख संग्रह नामक दूसरी पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११ जमशेत उद्योग मुहता नैरासी की क्वालिटी और मनोनी मान बंध महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रश्नो का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है ।

१२. बोजपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर जयचन्द मंडावी की ४ रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की कव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्वामि भारतीय' में लेख प्रकाशित हुआ है ।

१३. बेनारस के प्रकाशित १ 'हिमांतेश्वरी और 'भट्टि बहा प्रकाशित' आदि अनेक अप्राप्य और प्रकाशित ग्रंथ खोज-पाया करके प्राप्त किये गये हैं ।

१४. बीकानेर के मस्तपोदी कवि ज्ञानदाराजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानदारा प्रभावशी के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है । इसी प्रकार राजस्वामि के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की १६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है ।

१५. इसके घटिरित्त लक्ष्य आठ—

(१) डा. सुरजि पिछो वैस्तिचोरी समयसुन्दर, पूम्बीराम और लोक नाम्ब टिकक आदि साहित्य क्षेत्रों के निर्वाह-निबन्ध और व्यक्तियां मनाई जाती हैं ।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक क्षेत्रों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसने अनेकों महत्वपूर्ण निबंध लेख कविताएँ और क्लानिवा आदि पढ़ी जाती हैं। विशेष अनेक विषयों में साहित्य का निर्माण होता रहता है । निवार विमर्श के लिये क्षेत्रों तथा मापलमात्रों आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है ।

१६. बाहर से क्वालिटी विद्वानों को बुलाकर उनके मापल करने का आयोजन भी किया जाता है । डा. बालुबेशरल घटवाल डा. कैमरालाभ बल्लू राम भी कृष्णराज डा. भी रामचन्द्र डा. अरुणचन्द्र डा. जगन् एलेन डा. सुनीलकुमार बल्लूजी डा. सिनेरियो-सिनेरी आदि लोक अन्तराष्ट्रीय क्वालिटी प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आकर हो चुके हैं ।

एक दो वर्षों में महत्त्वपूर्ण पूम्बीराम उद्योग आसन की स्थापना की गई है । दोनों वर्षों के आसन-प्रतिवेदन के प्रतिपादक श्रमण राजस्वामी बापा के प्रकाश

विद्या जी मनोहर शर्मा एम ए विद्यालोक धीर पं श्रीमानजी मिश्र एम ए  
हृदयगत थे ।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-नाम में संस्कृत हिन्दी और  
उपस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है । प्रादिक संकट से ग्रस्त इस  
संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से  
पूरा कर सकती फिर भी यद्यपि कष्टवश कर विरते पड़े इसके कार्यकर्ताओं  
में 'उपस्थान भारतीय' का सम्मान एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रवास किया  
कि नाना प्रकार की भाषाओं के भाषाज्ञ भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता  
रहे । यह टीका है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न प्रच्छन्न  
संरक्षित पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित  
साधन ही हैं, परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की  
को मीन और एकान्त छावना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के जीवन को  
निरन्तर ही बढ़ा सकते वाली होगी ।

उपस्थानी-साहित्य-मंदार अत्यन्त विराम है । जब तक इसका अस्तित्व  
यथा ही प्रक्रम में आया है । प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अत्यन्त एवं अनर्घ रत्न  
को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें  
सुसंगत से प्राप्त करना संस्था का लक्ष्य रहा है । हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की  
ओर धीरे-धीरे निम्न दृष्टा के साथ प्रयत्न हो रहे हैं ।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कठिन पुस्तकों के अतिरिक्त अन्येषु द्वारा  
प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन नहीं हो सका भी अभीष्ट का परन्तु  
अभाव के कारण ऐसा किया जाना संभव नहीं हो सका । एवं ही बात है कि  
भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोधन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मंत्रालय (Ministry  
of Scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी  
सांस्कृतिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अन्तर्गत हमारे कार्यक्रम को  
स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु १५ ) इस वर्ष में उपस्थान सरकार को  
दिये तथा उपस्थान सरकार द्वारा प्रेषित की गयी अपनी ओर से मिशनर रु ५  
रु १ ) टीका द्वारा की गयी तथा उपस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

है। इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है, जिससे इस में निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है ।

- |   |  |
|---|--|
| १ राजस्वामी व्याकरण—                    | श्री नरोत्तमदास स्वामी                               |
| २ राजस्वामी पद्य का विकास (टीका प्रबंध) | डा. विजयचन्द्र शर्मा प्रबंध                          |
| ३ अक्षराक्षर शीघ्र सी बचविक्रम—         | श्री नरोत्तमदास स्वामी                               |
| ४ हमीराव—                               | श्री अंबरलाल नाहटा                                   |
| ५ पद्मिनी चरित्र चौपई—                  | " "  |
| ६ बलपुत्र विज्ञान                       | श्री राजेश चारस्वत                                   |
| ७ विजय पीठ—                             | " "  |
| ८ पवार वरु वर्णन—                       | डा. बजरंग शर्मा                                      |
| ९ पुष्पीराज राजेश्वर संवागशी—           | श्री नरोत्तमदास स्वामी और<br>श्री बड़ीप्रसाद साकरिया |
| १० हरिरस—                               | श्री बड़ीप्रसाद साकरिया                              |
| ११ पीरबाल बालसु संवागशी—                | श्री अमरचन्द नाहटा                                   |
| १२ महादेव पार्श्वती बेनि—               | श्री राजेश चारस्वत                                   |
| १३ सीताचम चौपई—                         | श्री अमरचन्द नाहटा                                   |
| १४ वीर असाहि संग्रह—                    | श्री अमरचन्द नाहटा और<br>डा. हरिचन्द्र शर्मा         |
| १५ लक्ष्मणचर और प्रबन्ध—                | श्री संजयलाल मजुमदार                                 |
| १६ विजयचन्द्र कृतिमुद्रावलि—            | श्री अंबरलाल नाहटा                                   |
| १७ विजयचन्द्र कृतिमुद्रावलि—            | " " "  |
| १८ कर्मिंदर वर्णन न प्रपावली—           | श्री अमरचन्द नाहटा                                   |
| १९ राजस्वामी चंद्र—                     | श्री नरोत्तमदास स्वामी                               |
| २० वीर रस चंद्र—                        | " "  |
| २१ राजस्वामी के नीति दोहर—              | श्री मोहनलाल पुरोहित                                 |
| २२ राजस्वामी अंत कथाएँ—                 | " "  |
| २३ राजस्वामी प्रेम कथाएँ—               | " " "  |
| २४ अंतकथा—                              | श्री राजेश चारस्वत                                   |

२१ महुसी—

श्री अगारबन्ध नाट्य

मःनितय सगर

२६ जिनहर्ष प्रभावनी

श्री अवरबन्ध नाट्य

२७ राजस्थानी हस्तलिखित श्रौं की विवरण

,

२८ हम्पति विनोद

, "

२९ हीरामी-राजस्थान का बुद्धिबर्धक साहित्य

"

३० समयगुन्धर रासमय

श्री अवरलास नाट्य

३१ कुरसा भाषा प्रभावनी

श्री बरहीप्रसाद साकरिया

बैतममेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा का बरारब शर्मा) ईशारदास बनावनी (संपा बरहीप्रसाद साकरिया) रामरासो (प्रो मोहनलाल शर्मा) राजस्थानी बीन साहित्य (ले श्री अवरबन्ध नाट्य) नाकरमण (संपा बरहीप्रसाद साकरिया) मुहम्मद कोरा (मुरलीधर व्यास) आदि प्रका का संग्रह हो चुका है परन्तु अर्वाभाब के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो सका है ।

हम धारा करते हैं कि कार्य की महुता एवं कुरता को मध्य में रखते हुए अपने वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें प्रसार प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संग्रहित तथा अन्य महत्वपूर्ण प्रका का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा ।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविभाग सचिवालय के ध्यागारी हैं, जिन्होंने हमारे हमारी योजना को स्वीकृत किया और डाक्ट-इन-एड की रजम मंजूर की ।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी मुष्ठाडिया को सौभाग्य से विद्या मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनर्धार के लिये पूर्ण लक्ष्य हैं वा भी इस सहायता के प्राप्त करने में पूछ-पूछ योगदान रहा है । अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सारर प्रकट करते हैं ।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाविभाग महोदय भी अवगतविहारी मेहता वा भी हम ध्यागार प्रकट करते हैं जिन्होंने अपनी धोरने पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहजन किया जिससे हम इस बहुर कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके । तस्मा उनको सर्वेभ नमस्कार ।

इसने बीजे समय में होने महत्वपूर्ण घन्टो का संघारन करके संस्था प्रकाशन-कार्य में भी सहाय्यीय सहयोग दिया है। इसके लिये हम उसी का सम्भारको व लैसको के व्यत्यंत धामारी हैं।

अनुप संस्थित लाइव पी और समय बीन प्रकाशन बीजनेर एवं पूर्णकाल साह्य संप्रदाय कर्मकता बीन भवन संस्था कर्मकता महावीर ठीरठिन अनुसंधान समिति बयपुर, धीरिपटल इन्स्टीट्यूट बरोडा भावार्थर रिचर्च इन्स्टीट्यूट पूरु सारवरण्य बृहत् ज्ञान मठार बीजनेर मोठीरच काजाची प्रकाशन बीजनेर, साय्यर भाचार्य ज्ञान प्रकाश बीजनेर, एधियादिक सोलाइटी बंबई प्राप्ताएव बीन ज्ञानमठार बरोडा मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी की सीताएव लम्पुष पी रचिंशकर देराची व हरवतजी कोमिह व्यंज बीसलमेर धारि अन्य संस्थाओं धीर व्यक्तियों के हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने के ही उपरोक्त घन्टों का संघारन संभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करवा अपना परम कृत व्यंज समझते हैं।

ऐसे प्राचीन घन्टो का संपादन अमरताध्य है एवं कर्मित समय की व्यवेष्टा रक्षता है। हमने अल्प समय में ही इसने अल्प प्रकाशित करने का प्रयत्न किया। हस्तलिखित कुटियों का यह ज्ञाना स्वाभाविक है। अन्त्या स्वतन्त्रकवि नवयोज प्रमाहृत हस्तलिखित पुर्जनस्तन समावर्तिता धामन।

धारा है विद्वत्पुत्र हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके आदित्य का रक्षास्वादन करेंगे और अपने सुम्भरो हाथ हमें साहाय्यित करेंगे विद्यते इन अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुन मा धारणी के वरुण कमलो में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पावलि समर्पित करने के हेतु पुन प्रयत्नित होने का आह्वान बढोर सकेंगे।

बीजनेर

मार्गशीर्ष शुक्ला १३

व २ १७

वितम्बर ३ १९९

निवेदक

सासचन्द्र कोट्यारी

प्रधान-मंत्री

धामन राजस्वानी-इन्स्टीट्यूट

बीजनेर

## भूमिका

शौर्य या बीरता मानव का एक महान गुण है और बीरता की पूजा सभी देशों में सब जाति में रही है। बीने तो रण भूमि में मर मिटनेवाले या विजय प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को ही बीर कहा जाता है पर भारत में शानबीर और धर्मबीर (कपमाबीर त्यागबीर तपबीर, साधनाबीर, ब्रह्म-बीर आदि) को भी बीरा हो महत्त्व दिया गया है और धर्म बीर बितने भारत में हुए हैं उतने धर्म्य नहीं मिलेंगे।

बीर रस को जब रसा में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शृङ्गार को छोड़कर और सब रसों से बीररस की व्याप्ति बहुत अधिक है। बीररस में हृष्य की भावना की वृत्ति के साथ धर्म-निष्ठता मूलरूप से विद्यमान है। इसलिए तब और मन दोनों को एक ही ओर यदि कोई रस केन्द्रित कर सकता है तो वह बीर-रस ही है। 'साहित्य-दर्पणकार' में 'उत्तम प्रवृत्ति बीर-सत्वरण हंकर बीर रस को धर्म्य रसा से श्रेष्ठ माना है। बीर रस का स्थायी भाव उत्साह है और उत्साह के बिना किसी भी कार्य में प्रवृत्ति एवं निष्ठा नहीं होनी इसलिए बीर रस की जीवन में निराला आवश्यकता है। इतिहास साक्षी है कि किसी भी देश का उत्थान वहाँ के बीर पुरुषों के द्वारा ही हुआ है। जब भी किसी देश में अपना बीर-वैद्य त्यागकर विलास को अपनाया तभी वह नष्ट हो गया। सत्रुओं पर विजय करने के लिए ही नहीं पर धात्मा की शक्ति को प्रकट करने के लिए भी बीरता की निराला आवश्यकता है। इसीलिए भारत में साधना-बीरों को भी महाबीर की उपाधि दी गयी है।

राजस्थान बीरो की भूमि है। यहाँ के राज-बादुरे बीरो की बड़ी प्रशिक्षण रही है। मध्यकाल में पुरुषों ने ही नहीं राजस्थान की नाटिका में भी

अप्रतिम बीरता दिखायी थी । बीर कर्मागिया ने समय-समय पर राज-मर  
 अपने बीरम हाथों की बरामात धनुषों को बिगाहर उम्ह कमलन कर  
 प्राप्त किया और अपने पति सेब पुत्रों को भी बीरता के लिए प्रोत्साहित किया ।  
 अपनी भीम रक्षा के लिए अपनी ही जौहर ब्याला में राजस्थान की  
 अनगिनत नारियो ने अपनी देह का उत्सर्ग किया । किसी देश के इतिहास में  
 ऐसी बीरता का उदाहरण नहीं मिलेगा । पति के बीर-मति प्राप्त करने पर  
 पत्निया उनके शत्रु या पसंदी भ्रात्रि किसी विद्वत् को लेकर बिठा में प्रवेश कर  
 जाती थी । वे सतियों के रूप में मात्र ही पूजी जाती हैं । बीरो कुमारों  
 एक सतिया के शत्रु और स्वयं राजस्थान के गांव-गांव में प्राप्त होते हैं ।  
 जर्नेल वेम्स टॉड ने राजस्थान की बीरता का मुक्त-कंठ से गान किया है । वे  
 लिखते हैं—

There was not a single flower in Rajasthan  
 which did not overwhelm with its incense of the  
 national valour and sacrifice not a single gale of  
 wind which did not blow with the spirited youths  
 who dashed and dared to adore the goddess of war—  
 not a single cottage in which enchanting lullabies  
 of selfless devotion and heroism were not sung;  
 there was not a single house which had not  
 produced a gallant who braved the storms of his  
 country with a ready heart.

अर्थात्—राजस्थान की भूमि में कोई ऐसा फूल नहीं उगा जो राष्ट्रीय  
 बीरता और त्याग की सुगन्ध से व्यापकित होकर न भूमा हो वायु का  
 एक भी ऐसा झेका नहीं उठे जिसकी मर्म के साथ युद्धवेदी के चरणों  
 में साहसी युवकों का प्रयाण न हुआ हो ऐसी एक भी कुटी नहीं थी जिसमें  
 मातेस्वरियों की गोद में निस्वार्थ समर्पण और बीरता की समस्तभरी

भारियाँ न पायी गयी हो न कोई एक भी घर वा जिसमें ऐसे बीर की सृष्टि न हुई हो जिसने अपने देश के शूकानों का तत्परता से सामना न किया हो ।

ता १८ फरवरी सन् १९१७ को राजस्थान-रिसर्च-सोसाइटी कलकत्ता के प्रापस्य में विश्व-कवि रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने समापति-पत्र से भाषण देते हुए कहा था—

“भक्ति रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी-न-किसी कोटि का पाया ही जाता है। रामा-कृष्ण को लेकर हर एक प्रांत में साधारण या उच्चकोटि का साहित्य निमित्त किया है, लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्माण किया है उसकी ओड़ का साहित्य और कहीं नहीं पाया जाता और उसका कारण है राजस्थानी कवियों ने कठिन सत्य के बीच में रहकर बुद्ध के नगरों के बीच अपनी कविताएँ बनायी थीं । प्रकृति का सम्बन्ध क्या उनके सामने था । क्या घाव कोई कवि बनने अपनी मातृकता के बल पर फिर वह काव्य निर्माण कर सकता है ? राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो एक प्रकार का भाव है—जो उद्बेग है—वह राजस्थान का घास घपता है वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं सारे भारतवर्ष के लिए पौरव की वस्तु है । राजस्थान का यह साहित्य कवियों के अस्तित्व से निजता है । अतः यह प्रकृति ने बहुत समीप है । ऐसा सबकुछ बहुत ही महत्त्वपूर्ण होगा और यह उचित होता कि घाव सकार के जम्हायारों इसका सुन्दर-रूप से सम्पादन करवाकर इसे प्रकाशित करें । मुझे प्रितिमोक्षण सेन महाशय से हिन्दी-भाष्य का आग्रह मिला था पर घाव जो देने पाया है वह बिस्मृत नहीं वस्तु है । मुझे उसे घाव तक सुनने का मौका नहीं मिला था लेकिन घाव मुझे साहित्य का एक नवीन मार्ग मिला है । मैं सुना करता था कि कारण-वर्षि बुद्ध ने समय उरोजना-वर्ष व कविताय सुना-सुना कर लोगों को प्रोत्साहित करते करते थे । पर घाव देने उन कविताओं का रसास्वादन किया और मुझे इस साहित्य में बहुत

और मासूम पड़ रहा है। इसका सम्पादन और प्रकाशन देश के लिए बहुत आवश्यक है।

राजस्थानी साहित्य बीर-रस-प्रधान है। चारण कवियों ने बीरो को उत्साहित करने के लिए उनकी एक उनके पूर्वजा की प्रशंसा में हजारों डिंगल पीठ बनाये हैं। बहुत से बीर-काव्य भी उनके रचित मिलते हैं। बीर-रस के फूलवर बोहे हजारों की संख्या में अब भी प्राप्त है। महाकवि सूर्यमल मिश्रण ने बीर-सतसई की रचना प्रारम्भ की थी पर वे २८८ श्लोके ही बना पाये। उसकी पूर्ति मोरबी नामक चारण कवि ने की जिसकी हस्तलिखित प्रति साहित्य-संस्थान जयपुर में है। सूर्यमल के रचित बीर सतसई के बोहे का कन्हैयालाल लहना धारि द्वारा सम्पादित होकर बङ्गाल हिन्दी-मण्डल कलकत्ता से प्रकाशित हो चुके हैं। विद्यमान चारण कवियों में भी गान्धुबान महियारिया रचित बीर-सतसई भी प्रकाशित हो चुकी है। मोरनेर के ठाकुर गुरेन्द्रसिंहजी ने भी एक बीर-सतसई बनायी है पर वह अभी तक प्रकाशित नहीं हुई। बीर-सतसई धारि तो और भी कई कवियों ने बनाये हैं। राजस्थान के अनेक काव्यों में बीर-रस का उत्साहवर्धक और पड़कता हुआ वर्णन है। इन रचनाओं को चुनकर एक बार तो कायरो के दिनों में भी बीरता का उच्चार हो पाता है। रणभूमि में बीर-पीठ डोल धारि बाधों के साथ पड़े जाते हैं जिससे बीरो के उत्साह में अप्रतिष्ठ वृद्धि होती थी। ये बीर-पान किसी भी राष्ट्र की मयूख्य जाती हैं।

राष्ट्र का बंध की सुरक्षा के लिए सूर-बीरता की अत्यन्त आवश्यकता है। महात्मा गांधी ने अहिंसा का मनुष्यपूर्व प्रयोग करके भारत को स्वतन्त्र किया। उन्होंने भी यही कहा है कि जानरी की अहिंसा वास्तविक अहिंसा नहीं है। जो अहिंसा का पालन नहीं कर सकते वे एक धारि लेकर अहिंसा का आश्रय ले सकते हैं पर वाक्यता का नहीं। इस तरह उन्होंने बीरता को एक नया मोड़ दिया है जन्मे अहिंसक एवं सत्य-वीर हैं। भारत एक बहुत बड़ा राष्ट्र है अब सब लोग बेसी अहिंसा को अनुष्ठानों के सामने खीना दान कर मरने की उद्यत कर बैठे हो पर मारने की नहीं पालन कर उन्हें यह सम्भव नहीं है।

राष्ट्र के संरक्षण के लिए राष्ट्रवीरता की नितांत आवश्यकता है। यह हमारे संनिष्ठों में प्रस्तुत 'वीर रत्न कुशा' जैसे प्रबो का अभिजातिक प्रचार होना वाञ्छनीय है।

माधुल-राजस्थानी-रिसर्च-इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, में ता १२ अप्रैल १९५६ को भारत के स्वामीन प्रतिष्ठा-मन्त्री डा कैलाशनाथ वाटव्हा महोदय का शुभामग्न हुआ। तब उन्होंने कहा था कि राजस्थान वीरों का देश है, यहाँ के वीर-नाम्नों के प्रकाशन से देश को बहुत बल मिलेगा। संनिष्ठों में स्फूर्ति और बोध का उत्पन्न होया। आपने वह भी कहा था कि इन्स्टीट्यूट वीर-नाम्नों को तैयार करवाकर हमें भिजें तो हम उसकी बहुत-सी प्रतियों के अधिम प्राप्ति बन पायेंगे। उनके इस निर्देशानुसार इन्स्टीट्यूट ने वीर-बोधा का एक सग्रह हिन्दी-अर्ध-सहित तैयार करने के लिए भी उत्तमदायकी स्वामी से निवेदन किया और उन्होंने जल्दी दिनों में इस ग्रन्थ को तैयार भी कर दिया था पर अर्थात्तव से वह अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका। भारत-भरदार ये राजस्थान-भरदार से प्रकाशन-सहायता प्राप्त होने पर अब हमें प्रकाशित करना सम्भव हुआ है। उसके लिए हम वीरस्वामीजी और दोनों सरकारों के विरुद्ध धामारी हैं।

जैसे ही वीररत्न के और भी हजारों बोधें अभी तक अप्रकाशित पड़े हैं, जिनमें से कुछ बोधों का एक सग्रह वीरवीरप्रसादजी गजदिया ने भी कर रखा है। अगर प्रस्तुत सग्रह को जनता ने आद्यानुकूल अपनाया तो उसे भी संपादित करवाकर ही इस प्रकाशित करने का इन्स्टीट्यूट प्रयत्न करेगा।

उपाध्याय डा कन्हैयालाल महल के 'राजस्थान के ऐतिहासिक प्रसाद' नामक ग्रन्थ की भूमिका में उद्धृत किया गया है। एतद्वय आपने भी हमें धामारी है।

अगरपन्ध माहटा  
अप्रोवेटर, श्री सादल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट  
बीकानेर



## प्रस्तावना

बहुम राह पर निगम समय कि there is not a pretty  
state in Rajasthan that has not had its Thermopylae  
and scarcely a city that has not produced its Leonidas  
हमारे निगम भूय गय कि हमोसकी बैम रससुत्र नैपारकरम  
बन कीर बैमिह बरिपो म भी राजधान का गाय रण म साधारण  
भीर भी लगी ली रहा है। परा क कीर तथा मायुह हरम बागल  
भार, लही, लकी कीर हालिनी को बरिवाया का बानिहाम  
महगुनि कीर भारि तथा गवमरियर कीर मिस्म क बाधामर  
म कय ग्राहिम म पायेम। सब मान है कि कीर राजधान भारम  
का कीर बन रहा है अब मानल राज कि राजधान भारम का गाय  
तथा मायुह हरम भी रहा है। राजधानी बैमिह कीर को नद  
मोसक रहे है कीर कोरी की नार मिह है। लगी बैमिह बरिवा  
नी को भीम म रही है बैमिह की लहमिह लरमन परा की  
दि बपारा मे मिमगी। हम लहि क कीर-मरिह म लहामर कीर  
नय की लहि है गृहामरिह मे मुरम-बदम-पाय बलम को  
नि है बरम-मरिह मे कदा मिस्म की लहि है कीर लहम  
दिम मे बैमिह-मरिह का म को लहि है। लहामर बमुरम लहाम  
का है—लहामर का कदा मे को लहि मुरं लह का मरिह का  
का है लहाम म लहामर है।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

देहि' । इस बीर जाति के बीर साहित्य में मी श्वी वीर-भाव आदि से अन्त तक भरपूर मिलेगा ।

राजस्थानी जीवन की सबसे बड़ी विशेषताएँ असन्न वीरत्व और स्वतन्त्रता-प्रेम है जो राजस्थानी साहित्य में ओठ प्रोठ मरे हुए हैं । राजस्थान की अभिजाती उसके अनुरूप ही दुर्गा-स्वरूपिणी माता करती है जिन्हें देवी का अवतार माना जाता है और वही रूप में पूजा जाता है । जन्ती का वरोचित स्वरूप राजस्थानी भावनाओं के अनुकूल कैसा सुन्दर व्यक्तित्व किता गया —

बकई डाढ़ बपह, बकई पीठ कमठ-री ।  
बकई माग बपह, बाप बड़े बर बीस-इन ॥

जब बीस मुजा बाबी माता सिंह पर सवारी करती है तो प्रबिनी को धारण करनेवाली बपह की डाढ़ें तड़क जाती हैं, कच्छप की पीठ बकक छटती है और शेषमाग तथा प्रबिनी कंपकंपान होकर उगमगमने लगते हैं ! राजस्थानी जीवन का प्रारम्भ किस प्रकार होता है, वह भी देखिये—

हम्म न देखी आपसी, रण-जेठां मित्र बाप ।  
पूत सिक्कामै शकरी मरख-बबार् मार ॥

माता नवजात शिशु को झुंघे में झुंझा रही है । मरने की महिमा की शिक्षा वह वही से देना प्रारम्भ कर देती है । माता छोरी देती हुई कहती है कि पुत्र ! मर जाना प्राण दे देना, पर अपनी भूमि को दूसरों के हाथों में न देने देना ! जो बाहक कोरियों में ही इस प्रकार 'जन्ती जम्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' और अधिकार-रक्षा का पाठ पढ़ते थे क्योंकि अपने अशौकिक वीरत्व और स्वतन्त्रता-प्रेम से संसार को चकित कर दिया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात ? यदि के

गोरव की रक्षा पीर-माताओं के हाथ में हाथी है इस तथ्य से चीन  
हथार कर सकता है ?

राजस्थानी जीवन पुरुष के बाह्य सौंदर्य का महत्त्व नहीं  
है। पुरुष का सचा सौंदर्य हमका भीर और निर्भीक हृदय है।  
राजस्थानी जीवन हमी की वामना करता है —

भैंसग तो भैंसा जगै हिरणी जगै मुगटू ।  
पान मरुच्छे छठ जमै थागइ थामै घटू ॥

शूदरी के बरपे मुख्य हाते हैं और हिरणी मुख्य बखों  
का जन्म देती हैं। पर घट सौंदर्य जिस काम का जब जना  
जीवन ही सचा संतप में रहता है। एक माधारण पक्षे की  
आवाज शान ही बचारे भय के मारे और छप्ने हैं और जोय  
मकर ही भागन बनाता है। जपर शूदरी के बखों का दमिय।  
हैमी निर्भीकता का शान के साथ बलन है।

बड़ बाण्ड था। बहुत भोलाभाण और भोला गाथा।  
जमही बाकी तो जगका विष्णु का हा और निहम्मा ही  
मममगी थी। पर मुय का अरगर काण। जमही बाकी म  
हमा हि काज जमका बरी जगता (जठ का लहवा) मकर  
बड़-बड़र हाथ के हाविषो पर काहमाण कर रहा है। निनक  
मामन जमे नर का मरगा हमारो का मदी द'ग का चन्द बड़  
बाह-बाह बड़ रहा है—

दिमदिम ध'ग होम ! लता लीवी गुन ।

बरी द'ग बाकी काहिका जगता ॥

बीर-माता के वृष का असर मला कहाँ जा सकता है !

जब हम अत्यन्त कष्ट की स्थिति में होते हैं तो प्रायः माता की याद आती है। हाथ माँ ! अरी मावही ! आदि शब्द हठात् मुँह से निकल पड़ते हैं। बीरमाता ऐसी स्थिति में ऐसे शब्दों का मुँह से निकलना सहन नहीं कर सकती क्योंकि वे शब्द हमारी दुर्बलता प्रकट करते हैं। राणकड़े का अशेष पुत्र उसकी आँखों के सामने मारा जाता है। असहाय बाबू माँ-माँ चिल्लाता है पर माँ करती है—

मायेरा ! मत रोय मत कर रही अक्षियों ।

कुछ में आगे सोय मरता मा म संभारजे ॥

जरे मायेरा ! मत रो आँखों को क्लृप्त मत कर, मरते समय कभी माँ को याद न करना क्योंकि इससे कुछ को कर्कश लगता है। मरना है तो हँसते-हँसते मरो। दुर्बलता दिखाकर मरण को कटु मत बतलाओ।

एक बीरबाता अपने असहाय और कर्तव्य-विमूढ़ देवर को कैसे जोबन्दी और प्रभावशाली शब्दों में कर्तव्य-मार्ग दिखाती है—

राह ! बड़ कमाऊगर, मूढ़ मरोड़ म रोय ।

मरवाँ मरणा हय है, राणा हय न होय ॥

देवर राह ! रोते क्या हो ? बड़ो मौझों पर हाथ बा। मरने के लिए मरना हय है, रोना नहीं। रोना तो निष्कार अवस्थाओं का काम है।

इन माताओं के बीरपुत्रों का भी कुछ बर्षन सुन लीजिये। पाण्ड वरस का वारस असाधारण से लोहा सेने को बसा। माता कहती

सकता है ? और पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणवह्मना अपनी सहस्रियों में उसके कारण सखास का पात्र बनें। ऐसी वीर-पत्नियों का पति यदि हँसते-हँसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुनिश्चित होता है कि उनके हृदय में क्रोमह माष नाम को भी नहीं है ? कठोर बातावरण में पलते-पलते क्या उनकी जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, इन हृदयों में क्रोमह माषों की धारा भी बहने की प्रवृत्ति वेग से प्रवहमान है जिसकी वे ऊपर से नीरस प्रतीत होती हैं। 'अस्मादपि कठोरयि मूढानि कुसुमादपि' का वे व्यंग्यत प्यारकरणी थी। इसलिये तो घण्टी हुई बिताओं पर हँसती-हँसती अपने पतियों के मृत शरीर के साथ बड़ जाती थी।

एक वीर-भारी युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

कंब 'कलीजै हमय कुम्ह, नांह पिरंती छांह।

मुदिषां मिछसी गीरबा। मिसै न पण-री बांह ॥

हे पति ! अपने और मेरे दोनों कुशों की ओर देखना। सांसारिक मृत्यु तो प्राण के समान आता-जाता रहता है। उसके लिए युद्ध से विमुक्त होकर दोनों कुशों को कर्तव्य न करना। यदि ऐसा किया तो तुम्हारी हज्जा भी पूर्ण होम की नहीं। झूटने पर अपना सिर तर्किये पर रखकर ही सोना, तुम्हारी प्रियवसा की बांह सिर रखने को नहीं मिलाएगी, यह निश्चित समझ रखना।

यह वीरपत्नी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुक्त हुआ उसी समय में अपने को विषया समझ लेती है। फायर की अंधारपिनी होने की अपेक्षा बिना की अंधारपिनी होना बड़ अच्छा पसन्द करती है। उसे विश्वास है कि जबनर उसका पति

सकता है ? कौन पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणबल्लमा अपनी छोड़ियों में उसके कारण उल्टास आ पात्र बनें । ऐसी धीर-पलियों का पति यदि हँसते-हँसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुचित होता है कि उनके रूप में कोमल माय नम को भी नहीं है ? कठोर वासावरण में पड़ते-पड़ते क्या ऊँचा जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, उन रूपों में कोमल भावों की धारा भी ज्वन ही प्रबल बेग से प्रवहमान है जितनी वे ऊपर से नीरस प्रतीत होती हैं । ब्रह्माह्मि कठोरपण्डि सुहृदि कुसुमाह्मि' का वे व्यसंत आहारण भी । इसलिये तो पचकती हुई जिताओं पर हँसती-हँसती अपने पतियों के सूत शरीर के साथ चढ़ जाती थी ।

एक धीर-न्यारी युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

कंच ! जल्दीवै समय कुछ, नाह पिरंती जाह ।  
मुदियां मिळसी गीदपा मिछै न पय-री बाह ॥

हे पति ! अपने धीर मेरे दोनों कुलों की ओर देखना । सांसारिक सुख तो छाया के समान आता-जाता रहता है । उसके लिए युद्ध से विमुख होकर दोनों कुलों का कलंकित न करना । यदि ऐसा किया तो तुम्हारी शूद्रा भी पूर्ण ज्ञान की नहीं । छोटने पर अपना सिर ठकिये पर रखकर ही सोना तुम्हारी मियतमा की बाह सिर रखने को नहीं मिछेगी; यह विधिवत समझ रहना ।

यह धीरफज्जी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुख हुआ उसी समय से अपने को विधवा समझ लेती है । अपर की अन्धश्रद्धावन्ती होने की अपेक्षा जिता की अन्धश्रद्धावन्ती होना बड़ अधिक फलदायक करती है । उसे बिश्वास दे कि जबतक उसका पति

बूझा थाता है। विवाह-मंडप में भी वह स्वामी के वीरत्वमय रूप को ही देखती है—

ढोछ सुखंठा मंगळी मळां मूढ पदत ।  
 बेंबरी में पीछाणियो बेंबरी मरखो कंत ॥  
 मीण ममाके देख्यो, करयो सङ्ग सराह ।  
 परखंती बग परलियो ओछी ऊमर न्हाह ॥  
 मैं परखंती परलियो बग मोंहि सनाह ।  
 आभो बाब सिखाव कर ओछी ऊमर न्हाह ॥

पति को यह ओछी ऊमर बसके लिए तुल का कारण होते के स्थान पर गौरव का विषय होती है, क्योंकि यह यह भी देख लेती है कि—

मैं परखंती परलियो तारख-री ठखिबाह ।  
 पर-बग झांवी प्हरतां प्हरै बग ठखिबाह ॥

स्वामी को युद्ध के वीर-बेरा से सम्मान यह वीर-नारी अपना कर्तव्य अपना अधिकार, समझती है। प्राणपिय पति को कमराज के सम्मने मेजबान रूप वह कभी विचलित नहीं होती। वह तो सोम्बास उसे मात्साहित करती है—

पछा फिर मठ म्ळंळ्यो पग मग हीम्हो डार ।  
 क्ख भळ प्ळ्यो रोव में, पर मठ म्ळ्यो डार ॥  
 माम्हे मठ लू कंबडा !, वा माम्हे मुळ खोड ।  
 मोरी संग-सहेलियो ठाम्मी हे मुग मोड ॥

प्राणोपमा प्रियतमा के मधुर अनुप्रेष को पचन करने को किसका जी म करेगा ? उसकी अवज्ञा करने का साहस किसका हो

सकता है ? कौन पति सहन कर सकता है कि उसकी प्रायश्चित्तमा अपनी सहेलियों में उसके कारण उपहास का पात्र बनें । ऐसी वीर-यज्ञियों का पति यदि हँसते-हँसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुचित होता है कि उनके हृदय में कोमल भाव नम को भी नहीं है ? कठोर पातावरण में पलते-पलते क्या उनका जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, इन हृदयों में कोमल मायों की धारा भी चलने की प्रबल वेग से प्रवहमान है जिसकी वे ऊपर से वीरस प्रतीत होती हैं । बजायपि कठोरपि सुदृढ़ि कुसुमापि का वे व्यक्त हो जाते हैं । इसलिये वो पपकटी हुई चिताओं पर हँसती-हँसती अपने पतियों के मृत शरीर के साथ पड़ जाती थीं ।

एक वीर-नारी युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

फँस ! कलौनी तमस कुम्ह, नाह पिरंती बाँह ।  
मुदियाँ मिछसी गीदबा ! मिछै न पण्नी नाह ॥

हे पति ! अपने और मेरे दोनों दुश्मनों की ओर देखना । सांसारिक सुख तो ज्ञान के समान आटा-गूँदा रहता है । उसके लिए युद्ध से विमुख होकर दोनों दुश्मनों को कर्तव्य न करना । यदि ऐसा किया तो तुम्हारी हथ्था भी पूछ दोन की नहीं । छोटने पर अपना सिर तकिये पर रखकर ही सोना तुम्हारी मियतमा की बाँह सिर रखने को नहीं मिछेगी, यह निश्चित समझ रखना ।

यह वीरपत्नी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुख हुआ उसी समय से अपने को विधवा समझ लेती है । मरने की अभ्यासिनी होने की अपेक्षा जिता की अभ्यासिनी होना वह अधिक पसन्द करती है । उस विरपास है कि जबतक उसका पति

जीवित है, तबतक इसकी सना कभी भाग नहीं सकती। मुझ में  
बहर को अकेला बंधनर उसके लिए आरंभित होनेवाली अपने  
जठामी का यह पीरनारी किस विरपस्तता के साथ बहर रही है—

भाभी ! बहर अकेलो साथीजै न सिंगर ।

सूझ भरोमो नहर-रो पोजा दाहणहार ॥

ह भाभी ! तुम्हारा बेपर अकेला है यह जानकर ठनिक भी साथ  
न करो। मुझे अपने पति का पूरा भरोसा है। उस अकेले को तुम कम न  
समझना। यह अकेला ही समस्त सत्य का विध्यस्त करने का कर्ता है।

पति मुझ में मारा जाता है। पति का अन्त हाथों से यमपत्र का  
सौनवाली मोरनारी उस अकेला कैते सौंप सकती है ? उस बिना,  
इस विवाह में अकेली यह कैते जियगी ! यह अन्त का भी स्पष्ट  
ही भौनती है। न पति का मृगु मुग में भेजते गमय खीर हाती है  
न सर्व स्थल सदगमय करन। पति का अन्त हुए उस लन आवा  
या ओर का अन्त खीर की हुई ही यह गमक भाव जातो है। पर बिना  
गमक के पूरे यह अन्त बिना का एक भविष्य करन दया भादती है—

बचो ! अके गेमगा बावद नै करिगार ।

जावो बाव न गमिगार टामक दहरदिगार ॥

ह पति ! मेरे लिए तो अके गेमगा का दया न-म के गमय का  
मेरे बिना का भी नहीं बजावी गवो पर अन्त मेरे बिना बहुत बहुत  
अन्त बचत है। अन्त मेरे गेमगारे बाव का भी गमगार बच  
दिगार है।

अन्त का हीन गमयदर गमक न न के गमय बावी न बचन का  
दवा पर बिना कीज आक है।

दोम गेमगारो गमयान का अन्त का गमन करण  
दवा है पर बिना दवा का दवा न

कलकत्ता से संसार को कंपायमानकर देनेवाली यह पीर राजपूत जाति  
 आब धोर विलास और विनाराकारी शराब तथा अफीम के तरो में  
 सुन-सुन सोकर कुत्सित जीवन यापन कर रही है। और मुस्कुराता  
 हुआ अतीव आज स्वर्ग की भयानक इसी हँस रहा है। पर राजपूत  
 जाति का वह तेज अब भी किसी-न-किसी अंश में बचा हुआ है।  
 मातृभूमि की दुर्दशा देखकर एक आधुनिक राजपूत रमणी अपने  
 काँवर पति को फटकारती है—

पराधीन भारत हुयो प्याँझा-री मनवार ।  
 मात्रभूम परतंत्र हो बारबार धिरमार ॥  
 दुसमय देसां छूटकर छे व्याप्य परदेस ।  
 राजत बुद्धियां पहर खो धरो जनानो मेस ॥  
 बिस दापो के सरय को सरवरियै-री पाह ।  
 के कंठां बिच पाह को पापरिया-री पाह ॥

मिथार है तुम्ह को प्याँझों के दोर-बीर में मातृभूमि को  
 पराधीन बना दिया बिदेशी प्रतिदिन देश को छूटकर छसस्र धन  
 स्रवत समुद्र पार से आ रहे हैं, पर तुम्हारे कानों पर सूँ भी नहीं  
 रेंगती। शर्म तो नहीं आती? तुम्हें भर पानी में डूब क्यों नहीं  
 मरते? अरे औरत क्यों न हुय। अब भी हाथों में बूँदियाँ ढाक  
 को और कमरों में पापरा (छईंग) पहन को।

यो सुहाग ग्राणे सगै जब कायर भरदार ।  
 रंदापो लागै नखो होय सूर सरदार ।

इस सुहाग से तो वैभव्य कितना ही अच्छा। अरे! तुम तो  
 सिंह-प्रभारण्य करनेवाले हो। तीतर, कया बटेर, परगोस, सुभर  
 का शिकार करके फूँक जाते हो। क्या यही तुम्हारी राजपूती है?

तीतर कया बटेर भर सुस्त्र सूर सिंघार ।  
 इसही राजपूती नहीं नाम सिंघ रणधार ।

अब भी कुछ हस्या है तो—

पक्ष कसूमख पहर छो, कसो कमर तरमार ।

बरखी और फटार से हुयो तुरंग असवार ॥

पाखा फिर मत म्झंक्रभ्यो, पग मत हीम्यो डार ।

कट मत आम्यो लेत में, पर मत आम्यो डार ॥

भीषण परद की कु-प्रथा से असहाय मनी हुई इस शत्रिय नाक  
को इतन से ही संतोष नहीं होता । वह फिर कहती है—

सीरा राज-री होय तो हूँ भी बाखू साथ ।

हुसमख भी फिर इंस छै म्झारा दो-दो हाथ ॥

धम्म है राजस्थान की बीरमारी । जो ऐसा भीसी बाछाओं  
को जन्म द सकता है उसको अपने पोर पतन अन्ध में भी निराश  
होने की आश्चर्यकता नहीं ।

राजस्थान का यह साहित्य जीवन से अलग नहीं किन्तु उसके  
साथ मिश्र हुआ है । राजस्थान के ये पौर साहित्यकार कलम के ही  
धनी नहीं होते थे तलवार के साथ भी खेलते थे । उनके इस स-मिश्र  
साहित्य का अमत्कार इतिहास अनन्त बार बरत चुका है ।  
एक उदाहरण देने का शोभ संघर्ष नहीं किया जा सकता ।  
महाराणा प्रताप विर्षित से विवश हो अकबर की अधोमत्या स्वीकार  
करने को तैयार हो गये । महाराणा राजपूत जाति की आन की  
अन्तिम आशा थे । यह दूरन्ध्र चाहती थी । उस समय अकबरी  
अवि-हृदय, जो परतप हाकर भी स्वतंत्रता का उदासक था परधीन  
ज्ञान पर भी जिसका हृदय परधीन नहीं हुआ था इस अन्तिम आश-  
स्तु का दूरत दूर धुल्य हो गया । बचान का उसने एक अन्तिम प्रयत्न  
दिया और परिणाम से पाठक अर्पणित नहीं ।

राजपूतों की उस अमर आन का रचक कौन था ? महाराणा  
प्रताप का महार्थि दूधौराज ?

जीमान फलेसात्रजी जीबन्दी गोलेका  
जबपुर बालों की ओर से मेंद ॥

## उपोद्घात

संस्कृति शब्द अंग्रेजी के 'कल्चर' शब्द के आधार पर भारतीय भाषाओं में प्रचलित हुआ है। कहते हैं, मानसिक रोटी के अर्थ में प्रथम बार 'कल्चर' शब्द का प्रयोग कार्ड बेज़न ने किया था। जिस प्रश्नर रंती के लिए जमीन तैयार करते समय कड़क-बाबर तथा अन्य अनायासक वस्तुओं को दूर कर दिया जाता है ताकि उसमें बीज बोने पर अच्छी फसल हो सके, उसी प्रकार मनुष्य के स्वभाव में, उसकी मनासुप्तियों में जो संस्कार, जो परिमार्जन अथवा परिष्कार, होता है उसे संस्कृति कह सकते हैं। जहाँ संस्कृति है वहाँ उदारता का अन्वय दर्शन होगा। बड़े हुए तालान का पानी गँदसा हो जाता है क्योंकि पानी का लिए मुक्त प्रवाह आवश्यक है। जो मनुष्य अपने संकीर्ण स्वार्थों के घरे में आवद्ध रहता है, उसकी मनासुप्ति भी दूषित ही समझिये। एक व्यक्ति को हम संस्कारी व्यक्ति नहीं कह सकते। जिस प्रश्न में एक भी संस्कार-सम्पन्न मानव पिचरल करता है, उस स्थान का पाठापरम ही सुरक्षित और आशाकित हो रहता है। दूसरे को भलाई करने में जहाँ मनुष्य का सुख मिलने लगता है वहाँ वह जंगल परापिच्छता के मार्ग को छोड़कर संस्कृति के मार्ग में परापरल करता है। पशुओं में जिस तरह स्वार्थ की प्रबलता दृष्टी जाता है उस तरह संस्कार-सम्पन्न मानव में नहीं। यन्तुन दया अथवा मानवोचित गुणों का पिचल ही संस्कृति का प्रमुख लक्षण है।

मदरता और संस्कृति इन ही शक्तों का तारतम्य पर भी पिचार कर बना अन्वयक है। कुछ भाग समान्यक मानकर

● श्री अन्वय विवरण्ड इन नन्दार ●

जयपुर

इनका प्रयोग करते दृष्टे जात हैं किंतु दोनों शब्दों में बड़ा अन्तर है। सम्मत्ता यदि बड़ है तो संस्कृति है बड़ के भीतर खनबाना माख-तख। सम्मत्ता यदि पुष्प है तो संस्कृति है उसके भीतर खड़े पाली सुगन्ध। एक व्यक्ति अपने मस्तिष्क की सहायता से किसी वस्तु का आधिपत्य करता है किंतु उसकी सम्मान को बड़ बड़ अनायास प्राप्त हो जाती है। मोटर, रेल, वायुयान आदि का आधुनिक ज्ञान हम न भी हो जब भी हम उनका बराबर उपयोग कर सकते हैं। ये सब सम्मत्ता के उपकरण हैं, संस्कृति के नहीं। व्यास, बास्मीकि, अक्षिनास गटे और शकसपीयर के प्रयोगों का रसास्वादिम कोई शिष्ट व्यक्ति हो कर सकता है। इससे सिद्ध है कि संस्कृति पर बहुत ही अधिकार प्राप्त नहीं किया जा सकता। उसके लिए साधन की आवश्यकता होती है। पुष्टि जिस तरह व्यास नहीं मिलती वही तरह संस्कृति भी व्यास नहीं मिलती। धन से भी संस्कार नहीं करीबे जा सकते। धन हो तो मोटर करीबिये रेडियो का आनन्द उठाये वायुयान में सफर कीजिये किंतु सचार्ज, भारता आदि संस्कार फ्लां से आने के ? उनको तो हमें अपने जीवन में अतिरिक्त करके दिखाना होगा।

सम्मत्ता का अनुकरण हो सकता है संस्कृति का नहीं। मैकेनिकल का दग के कल-करलाने मुळ सकते हैं, बैर, बीमा-कम्पनी आदि सबकी स्थापना की जा सकती है, साधन सम्पन्न होने पर एक वायुयान यात्रा तक कि परमाणु बम भी आदि जितनी संख्या में तैयार किये जा सकते हैं किंतु कहाँ है वह कैबरी जहाँ मीरों प्रताप और पाव की सजीव प्रतिमाएँ अर्जर देकर बनबायी जा सकें ? अतन्त मानव समुदाय की शक्ति का एक साध प्रयोग करके भी टैगोर, युद्ध और शंकर आदि का स्वेच्छा से निर्माण नहीं किया जा सकता। हालाँ, हालाँ ही क्या असंख्य एमान-रयामाओं को मिखाकर भी एम और

हृष्य नहीं बनाये जा सकते । सम्प्रदा से सम्बन्ध रखनेवाली यस्तुओं पर एक बार बन गयीं तो सारे संसार में फल जाती हैं और उनका महज ही नामा नहीं हो पाता किन्तु विभिन्न संस्कृतियों के संपर्क तथा परस्परता के कारण संस्कृति के विस्तृत अभया विस्तृत होने की आशंका पनी रहती है । इस दृष्टि से दूरे जाने पर सांस्कृतिक रक्षा का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण हो जाता है । संस्कृति अभया मानवोचित गुणों को नष्ट कर यदि हम सारे संसार का राज्य भी प्राप्त कर लें तो यह भी किस कामका ? इसीलिए महात्मा गाँधी जैसा सुसंस्कृत मानव अहिंसक साधनों द्वारा स्वराज्यप्राप्ति की अपील करता है । सब तो यह है कि संस्कृति-क्षोभ से बड़ी हानि इस दुनिया में दूसरी नहीं ।

किन्तु संस्कृति तो एक अमूर्त भाव है, इसके स्वरूप का निर्णय कैसे हो ? सभी देशों में ऐसे महापुरुष अस्त होते हैं जो मानवोचित गुणों को अपने जीवन में चरितार्थ कर संस्कृति का सचा स्वरूप रखा कर जाते हैं । राजस्थान में भी ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं जिन्होंने बलिदान त्याग-भक्ति, क्षारता तथा प्रतिष्ठा-यत्न का दिव्य आदर्श संसार के सामने रखा है । गुणों की प्राप्ति करनेवाले और अयुक्तों की निर्भीकता पूर्ण भर्त्सना करनेवाले कवियों का भी यहाँ अभाय नहीं रहा । राजस्थान में इस प्रकार के असंख्य शाह और गीत प्रपञ्चित हैं जिनमें यहाँ के युद्धवीरों ब्याधीरों और दानवीरों की गौरव-गम्या का उत्तेजक हुआ है । जिन पदनामों में यहाँ के पारणों का मानवोचित गुणों का निरर्थक दिखलायी पड़ता है व गीतों और शाहों के रूप में वह दिया करते थे । ये पद पारणों की जवान पर ही न रहकर सर्प-सुधारण की जवान पर आ जाते थे । बहुत से शाह तो एक मिश्रित हैं जिनके निर्माताओं का कोई पता नहीं चलता किन्तु फिर भी जनमानस की द्वाय उन पर चर्चित होन से वे आपस में आश्रित हो गये हैं । किन्तु हमें यह अर्थ न समझ जाय कि

राजस्थान के चारण्य बिठवावली बल्लाननेबाबे निरे चादुआर थं। वे जब कमी नापरता कृष्णता अथवा अन्य किसी प्रकार का अतीविराग देखते तो अपने बिसहरो' (निन्दा-सूचक शब्दों) द्वारा उसकी भर्त्सना क्रिये बिना नहीं रहते। जिस समाज में घुरे को गुण होते बाबा नहीं होता उस समाज का पतन हो जाता है। बाह्मीकि-यम-पय की सीता ने इसी बात को हृदय में रखते हुए राजपूत से कहा था—

मूर्त न ते जन कश्चिदस्मिन्निभेषसि स्थितः ।  
 निवारयति यो न त्वां कर्मणोऽस्माद्विगर्हिषात् ॥  
 इह संतो न वा संति सतो वा नानुवर्तसे ।  
 यथा हि विपरीता ते बुद्धिपचार-वर्जिता ॥ (सुन्दर-कांड)

अर्थात् तुम्हारे कल्याण की कामना करनेवाला यहाँ कोई विरगवादी नहीं पड़ता। यदि होता तो क्या वह तुम्हें इस पृथिवी कर्म करने से रोकता नहीं? अरे! यहाँ संत क्या हैं ही नहीं अथवा संतों के मार्ग का तुम अनुसरण ही नहीं करते? सभी वा तुम्हारी विपरीत बुद्धि व्यापार-विहीन हो गयी है।

राजस्थान में ऐसी असंख्य ऐतिहासिक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं जिनसे यहाँ की संस्कृति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। कुछ जनश्रुतियाँ तो ऐसी हैं जिनकी सुनकर तबीयत फटक उठती है और हृदय में पराप्त भावनाओं का संचार होता है। अतीत की स्मृति में स्थापित ही रहा आश्चर्यस्य प्रकाश जाता है और फिर उस राजस्थान का तो कहना ही क्या जिसका महिमाभय अतीत अनेक मान्योपित गुणों के क्षिप आज भी स्फूर्ति और प्रेरणा प्रदान कर सकता है। सांस्कृतिक मंदिर की अराजक ज्वालि का जगाव रखन में राजस्थान के चारण्यो न आ महत्त्वपूर्ण योग दिया है, उसके स्मरण-मात्र से बिध पुनर्जित हो उठता है।

प्राचीन ने अपनी एक कविता में कहा है कि—जीवन भर मैं  
 संपर्क करता रहूँ, किन्तु मेरी अन्ततम इच्छा है कि हे मृत्यु ! जब  
 कभी तू आवे, चुपके-चुपके आकर मेरा प्राणांत न कर शासना, प्रत्यक्ष  
 होकर मुझसे मुख करना; मैं तो अमृता ही रहा हूँ यह एक मुख और  
 सही । मृत्यु से छोड़ा देने की इस बीर-भावना की बड़ी प्रशंसा की  
 जाती है और वस्तुतः यह सराहनीय है भी किन्तु प्राचीन को ही  
 यदि यह ज्ञात होता कि भारतवर्ष में राजस्थान जैसा एक ऐसा अद्वितीय  
 प्रांत भी है जहाँ मृत्यु को स्वीकार के रूप में मनाया जाता है, पारा-  
 वीर्य में स्थान फरमा जहाँ परम और पवित्र कर्तव्य समझा जाता  
 है तो निश्चय ही उनकी पाखी प्रफुल्लित होकर प्रशंसा के बहुमुखी  
 अंगारों में फूट पड़ती । राजस्थान का यह मरण-स्वीकार तो एकदम  
 नवीन है और यह कोरी कवि-कल्पना नहीं—यह एक ऐसा समुच्चय  
 ऐतिहासिक तथ्य है जिस पर सहस्रों सुन्दर भावनाएँ भी नवीकृत की  
 जा सकती हैं । राजस्थानी सभित्य के आँखों में इस अतीत युग का  
 दर्शन कर इस मरण-स्वीकार का आनन्द तो बड़ावै—

आज घरे सासू कहै, हरद्वार अचानक काय ।

वहू बल्लेया हूँसै पूत मरेबा जाय ॥

अर्थात् सासू कहती है कि आज घरमें यह अकस्मात् हर्ष  
 ऐसा ! ओह, अब इसे माझूस हुआ कि पुत्र पारा-वीर्य में स्थान करने  
 का रहा है और पुत्रपथ सती होने को दुखस रही है । बेरा की बहिवेदी  
 पर जब पुत्र अपने प्राणों को नवीकृत कर रहा था तब बीर प्रसविनी  
 माता को पुत्र-जन्म से भी अधिक हर्ष का अनुभव होता था—

मुत मरियो हित इस-रे हरद्वो पंधु-समाज ।

मा नई हरली जलम व, जितरी हरली आज ॥

रक्षपंडी का रास रचकर जहाँ मरण-महोत्सव मनाया जाता

या पुत्र को स्तन-पान कराते समय जो सिंधू-राग से आनंदित हुए करती थी जो कुछ भी मान-मर्यादा की रक्षा के लिए जोहर की मर्यादा में जीवित नष्ट जाया करती थी जो हमेशा ठठकर भगवान् माता को इस प्रार्थना के साथ अभ्यर्च देती थी कि हे सविता ! मरी कोश हो कभी न भगवान् जो अपने स्तनों से ऐसे भाग के दुग्धों को पैदा करो की कि विम्याओं को छलकर कर जितके पैर बढ़ाव ही शून्नी की पठती थी—

धरतां पग धर पूजती, दृक्छता विगम्य ।  
जयती रत्नपूताक्षिणीं यय-वी मय्यर्चयाम् ॥

जहाँ हैं आज के मारियों जो 'हम्म न इन्ही आपणी' की सोरी देती हुए पड़ने में पुत्र को इस मरण-महोत्सव का महत्त्व सिखाया दिया करती थी ! राष्ट्रीय जागरण के इस युग में आज की मारी राजस्थान की इस बीर नारी से क्या निर्भीकता का पदार्थ-युक्त न सीखेगी ?

यदि बाबू ने अपने कर्म्य द्वारा मृत्यु को गौरवामयित किया है जीवन की पूर्ति के रूप में उन्होंने जो मृत्यु का चित्रण किया है वह कमकी नहीं है न समझी जाती है किन्तु फिर भी वह वर्तन-शास्त्र ही रहा । गुरुदेव ने बतलाया कि मृत्यु किसी भी प्रकार करने की मृत्यु नहीं वह तो जीवन के अमृत प्रवाह में एक विभ्रम-मात्र है माता के एक स्तन से दृढ़कर दूसरे स्तन के लग जाना है । मृत्यु के इस तत्त्व ज्ञान का सैदा मूर्तिमन्त रूप राजस्थानी साहित्य में मिलता है उस पर केवल राजस्थान ही नहीं सम्पूर्ण भारतपर्यं गौरव में अपना मस्तक उँचा कर सकता है । राजस्थान के इन जाइसे सपूतों ने मृत्यु के साथ जो स्निहपाह किया था उसमें स्वयं मृत्यु भी अश्रमीत हो गयी होगी !

● अपने की मृत्यु प्रति-सोच पर होतो है ।

अरुण है मरण वराकमो की दावा स ! ( जयार्चन )

शय्य और पराक्रम की जैसी अद्भुत रूप्यता राजस्थान के कवि की संगती से प्रसूत हुई है उसका पढ़कर आम भी हमारी मुक्ति पश्चात् होती है। एक याददा रखो कि म शत्रु सेना से छोड़ा लेता रहा। युद्ध-भरत-भरत उसका मुख धराशायी हो गया किन्तु फिर भी यह कबंध के दर में लड़ता रहा और उसने मारी सना से सन्ध्या कर दिया। थोड़ा का थोड़ा जब उस पीर के पबंध का सही-सकामत से जाकर गृह-द्वार का लड़ा हुआ तब उसकी स्त्री क्या बगरी है कि—

भइ पिण माधै जीतिया लीला पर स्यायाह ।

मिर भूष्या भोज्य पण्य मासू-रो जायाह ॥

पत्नी रहती है कि मरी माम का पुत्र कितना भोला है— यह अपना मिर ही रक्षाज्ञ म भूल आया। हम दाह का अत्याचारिक पढ़कर कोई उमरा ब्रह्मास रर सखा है पर मिर पर मंडराती हुई मायु की अरुहन्ता करनवाली पत्नी की हम अति म पति के अमाधारण शय्य पर हय-पूण्य आरपय की व्यजना जिस नाटकीय विप्रात्मकता के साथ हुई है वह अद्भुत ही नितान्त अद्भुत है।

किन्तु क्या आरन माया है कि राजस्थान के य विज्ञानी मायु जैसा भयंकर शत्रु के साथ इस प्रकार का यज्ञ कैसे यज्ञ सक ? प्राणा से परिधान कई ईसी-यन नहीं है। यह तभी संभव है जब प्राणी से भी प्यारा कई महान् आदरा ममान हा। किसी प्रपन बगमया बनरही परं स्मृतिशायिनी भारभाय से अनुप्राणित हुए बिना मायु का निर्भीकता-नृपक विरह आनिगन कभी सम्भव नहीं हो सकता। यदि ऐसा न हो तो किसी का क्या पहा है या मायु की विभाविताओं से मान ? अरुण आर अथर्व आरणा के निमित्त राजस्थान ने बड़ा भारी इमार्ग किया है। इस माय भव्य पाग आम बलिदान राजा गुप्तन राजागव-रदा आनि बन्धि राजराज

आन-बान और प्रतिष्ठा-पावन का जो अकल्प आदर्श एतद्वर्ती साहित्य में कूट-कूटकर मरा है वह किसी भी सहृदय व्यक्ति का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। इतना ही नहीं किसी को बेरा और किसी भी काबू का सबा बीर उससे किसी-न-किसी अंश में अवश्य स्फूर्ति प्रदत्त कर सकता है। गायत्री-मंत्र में बुद्धि को सत्य की ओर प्रेरित करने के लिए भगवान् सविता से प्रार्थना की गयी है। सूर्य-देव को संबोधित कर निम्नलिखित दोहों में पारस में जो इच्छा प्रकट की है उसमें भी मन्त्र की सी पवित्रता और शक्ति मरी है—

मस्ता ऊम्मा माण ! माण ! तुहार भामणा ।

मरण-विषय लग माण यद्यो असप-राज अ ।

अर्थात् हे सूर्य ! तुम मरे रहित रूप में तुम पर स्वीकार होता हूँ। हे करम-कुमार ! मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि मृत्यु-पर्वण मेरी मान-मर्यादा की रक्षा करोगे।

आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए जो बलिदान राजस्थान ने किये हैं उनके स्मरण मात्र से आज ऐमाँच और हर्षाद्रिक हो जाता है। वह विस्वास होम लगता है कि जिस बेरा को इस प्रकार की महा महिमा-शाली संस्कृति का बहू प्राप्त है उसे निरुपद्रव होने की आवश्यकता नहीं है।

फ-हैयस्थस स्तुत

# सूचिका

पृष्ठ

## संग्रहावरण

१ प्रस्ताविक	१
२ शीर-सहिमा	२
३ रजपूनी ( शीर )	४
४ राजपूत ( शीर )	५
५ शीर के प्रतीक	
( विष बराह बचन )	६
१ राजा सिपाही	१६
७ मुख्य सरदार	५
८ स्वामीमछ	२१
९ युद्ध	२३
१ शीर पति	५६
११ शीर पत्नी	४
१२ शीर माता	४७
१३ शीर बालक	४८
१४ घोड़े	५१
१५ मीन	५२
१६ नाबर	५२
१७ चारख	५६
१८ राजपूत भारत	५१
१९ शीर-बलीष्ट ग्रामभा	५२
२ उद्घोषन	५६
राजपूत जाति	५६
राजपूत रत्न	५७
देवी राजा	५

	१४
२१ स्वतन्त्रता-युद्ध	७२
नवीन क्षत्रिय	७२
बालनयावर तिलक	७३
माधी	७३
जवाहरलाल नेहरू	७३
क्षमिति	७३
२२ साहित्यी महिमा	७७
२३ जयसुधार	८
मनुस्मृतिका	८१
पदिपिट—इतिहास प्रसिद्ध वीर	८५

(क) बालवीर

( नाम ऊनर पोड बछराज ठाणो जयदेव वीर,  
कराउतिह नूणकराछोठ महापरा पयतिह यीम  
क्रियतिह महापरा जयतिह भीमतिह जयतिह ) ८८

(ग) वृद्धवीर

( महापरा प्रतापतिह, बाबल, रामा धमरतिह, पयतिह,  
पठोड वीरपरा पय जयमान धमरतिह पठोड  
दुर्गासत पठोड वरूतिह वनरीतिह, वस्यापतिह, वीर  
तिह, भीरुतिह, यद् बाबल पयतिह, नुनपतिह,  
महापरा मानतिह जयतिह, यद् वेष्टो विरतिह,  
ताहूतिह, वृद्धपतिह, वीरपतिह, ययतिह नुनपरा  
तिह, तापतिह, नुनपतिह वनु पठोड ऊनो पठोडदेव,  
यीम जानाजान )

मनुस्मृतिका

१२

१२३

# वीर-रस-रा दूहा

## मंगलाचरण

बबड़े बाह बराह कड़कै पीठ कसहु-री ।  
बबड़े नाग धराह, बाघ बड़े जड़ बीस-हथ ॥

### १-प्रस्ताविक

जननी ! जय अहंदा जयो कै दाता कै सूर ।  
मा तर रहऊ बामही मती गमाऊ नूर ॥१॥  
'इला न दयो आपसी रगु-जतों भिड़ जाय ।  
पूव सिरापाँ पाछयै मरण बढाई माय ॥ ॥

जब बीस-भुजा देवी सिंह पर छवार होती है तब गृध्री को चारण  
अवेबाछे बराह को डारें डूब जाती है कम्बुज को पीठ कड़क उठती है  
और तब बड़ा गृध्री कवित्व हाथ लगाते है ।

### प्रस्ताविक

१ हे माता ! कुछ जना तो जैना जानना को या तो दाता ही या  
बीर । नहीं तो बॉम्ब ही रहना । बिहारी पुत्र का जनकर अपने बीरव क  
तब का मल गँवाया ।

२ अपनी भूमि को किसी को न देना उनके सिध रख-भूमि में  
भिड़ जाना'—माला हम प्रकार पुत्र को कृष्ण में मुझात समय ही मरन  
को महिमा मिलाती है ।

॥ धर जाती, भ्रम पक्षुटवां त्रिषा पक्षुटां ठाय ।  
 ॥ औं तीनू दिन मरख-रा, कहा रंक, कहा राय ॥१॥  
 राहण ! पट्ट कमाय-गर ! मूख मरोष म रोष ।  
 मरवां मरखा हख दे रोखा हख न होय ॥२॥  
 मरवां मरखा हख दे, ऊबरसी गस्साइ ।  
 सापुरसां-रा जीन्या बोवा ही भन्खाइ ॥३॥

## २-धीर-महिमा

हिम्मत हिम्मत हाय बिन हिम्मत हिम्मत नहीं ।  
 करै न अपहर कोष रव अगव धू रागिया ॥१॥  
 मर गिया खिर गगखिब नहीं, दुसमय-य सौ बाण ।  
 बे-पडिया ही नांछा, बै पडियां-य राण ॥२॥

१. जब अपनी मूर्ति का रही हो जब कर्म पकड़ रहा हो और जब  
 नारी पर अंकुश पड़ रहा हो—ये तीनों दिन तबके खिन्नु करने के ( प्राण दे  
 देने के ) दिन हैं चाहे रंक हो या राजा ।

२. हे मनुष्य-नारी राहण ! मौखी को मरोड़ रो मर । बीरों के खिन्नु  
 मरवा उचित है रोना उचित नहीं ।

३. बीरों के खिन्ने मरवा उचित है । उनकी भावें बीह्व रह चार्वमी  
 ( उनके मरने पर भी उनकी कठोभावान्वित सत्ता में बची रहेंगी ) । अपने  
 पुत्रों का जीवन बोवा हो वो जी नञ्का ।

## धीर-महिमा

१. हिम्मत से ही मनुष्य की कीमत होती है । बिना हिम्मत के  
 कोई कीमत नहीं होती । हिम्मत से रहित पुरुष का रही कमजोर के समान  
 कोई चारु नहीं करता ।

२. बाबीराज कहता है कि जिन पर शत्रु के सौन्दर्य दाम-पेच की  
 किरकी नहीं होवे वे मनुष्य बिना पड़े ही पड़े हुओं के राजा हैं ।

।घोडां पर हाथी पटलु भाखा रंगम यणाय ।  
 ।उ ठाकर भोगै जमी अमर किसो अमणाय ? ३॥  
 ।छिर-छिर भट्ठल जे सहे, हाका वाजताइ ।  
 ।त्यां पर हरी बंदरी धरणी क्य पुरखाइ ॥४॥  
 ।सीगाळो अयगस्तुहा जिण कुछ इकन जाय ।  
 ।वास पुणखी पाव म्यु जण-जण मध्ये पाय ॥५॥  
 ।बटा जयां कूण गुण, ओगण कूण पियाइ ।  
 ।म्यां ऊमां पर आपणी गंजी जै अयराइ ॥६॥  
 ।फरि-कस, भुजंग-मणि, सरखाईं सुहवाइ ।  
 ।मली-मयोधर करण-धन, पदसी हाथ मुपीइ ॥७॥

१. जो हाथर घोड़ों को घर हाथों को बत और भाखों को रंगम बनाकर भूमि का उपभोग करता है ( सदा घोड़ों पर रहता है ) उनकी भूमि भी हमारा क्षेत्र धरना सकता है ( अपने अधिकार में कर सकता है ) ?

२. कुछ-भूमि में हत्ता हाथे घर जो बार-बार बरबाद के आवाज महसूस करत है कबलों की भूमि उनके घर को दामी होती है ।

३. जिस कुछ में बड़े सीमोंवाला और उरुह बोर लक भी नहीं बही होता उसका ऊपर पुगानी बाव को आति होकर के पैर पड़ते हैं ।

४. जैसे कुछों के काम लेने से बरा लाभ और बुद्धियों के अस्म लेने से बरा हानि, जिन कुछों के लड़े रहते अपनी भूमि दूसरों द्वारा बर-दखित की जाती है ।

मिह के बाव ( बरबाद ) कांर को मणि, बोरों के घरबावत मरी छी के बराबर और कबल का धन—उनके मरत घर हो दूसरों के हाथों में पड़ लगे हैं ।

## १-राजपूती ( वीरता )

सुभो रज-वट परखणो जै रज-वट भइनाय ।  
 प्राण जटै रज-वट नही, रज-वट जटै न प्राण ॥१॥  
 रज-वट मख बीठी सखी, बीठा पखा सु-मह ।  
 सिर पड़ नायै घब कबै वा कसी रज-वट ॥२॥  
 बन मिछ नायै छम किन्ना सूर । सुखीजै बोल ।  
 मरियां रजपूती मिछै आ बन पीन भमोछ ॥३॥  
 रजपूती पाबन किती करी दुहेछी होम ।  
 म्यु-म्यु जोडै सेछडा म्यु-म्यु मूषी होय ॥४॥  
 जो करसी किछ-री दुखी, आसी विष नूती ।  
 आ नह किण-रा बाप-री मगली-रजपूती ॥५॥

१. राजपूत का परखना पीना-सादा ( बहुत सरल ) है । ये राजपूती के लक्षण हैं—जहाँ माँओं का मोह है वहाँ राजपूती नहीं राजपूती है वहाँ जहाँ माँओं का मोह नहीं ।

२. हे सखी ! बहुत वीर देखे पर राजपूती नहीं दिखायी पड़ी । तुझ में सिर मिर बाप वीर फिर भी बड़ लड़ना रहे—यही सखी राजपूती है ।

३. परिश्रम करने से बच मिछ जाया है हे वीर ! मेरी बात सुनो पर राजपूती मात्र देखे से मिछती है, इसलिये वह बन की भयंका बहुमुख है ।

४. राजपूती बालक बिल्ली (—बोली ) भी हो को भी बड़ी कठिन होती है । ज्यों-ज्यों वह पचे जोड़ती है ( लड़ा की माँठ बढ़ती है ) त्यों-त्यों उलझी कीमत बढ़ती है ।

५. मरित वीर राजपूती को जो करेगा उसी को होपी । उसके पास में दिया तुझको स्वयं का पहुँचैगी । ये किसी व्यक्ति-विशेष या जाति-विशेष की बनीती नहीं है ।

## ४-राजपूत ( वीर )

योगम करणा इन्द्रिया नर गुणवान् बहुत ।  
 पण विरह्य दीसै प्रधी मरणा रजपूत ॥१॥  
 नह हली ! छत्र-धम्मरां नह बह न्यामां हूत ।  
 अ मरही हित वस-रै हे बै ही रजपूत ॥ ॥  
 नह मूषा घन-धान-सू नह मूषा घर हूत ।  
 सूषा मरही वस हित पै मूषा रजपूत ॥३॥  
 निम-रा स्यारध-साधणा घर-घर पण्डा सपूत ।  
 कमर फसै हित वस-रै पै मूषा रजपूत ॥४॥  
 रजपूता गुण पूछती वर सखी ! मानूत ।  
 पर पड़िया घर झरतै रज भञ्ज रजपूत ॥५॥

१. राज्य करेवाले गुणवान् पुरुष बहुत वस्त्रों पर शून्नों पर कुद में  
 मायेवाले राजपूत ( वीर ) दिख हो दिखानो पक्क है ।

२. हे मरही ! राज-पूत वीर घरों में कोई राजपूत नहीं होता वीर  
 न बड़े नाम में कोई राजपूत होता है । जो वस्त्र के छिन्न मरते हैं वे ही  
 राजपूत हैं ।

३. अधिक धन-सम्पत्ति का उंच महलों के द्वारा राजपूत मरवावान्  
 ( मरवावाको ) नहीं होते वीर न जमान के द्वारा मरवावान् होते हैं ।  
 बायो का मरना मरवाकर जो वस्त्र के छिन्न मरते हैं वे ही राजपूत मरवावान्  
 होते हैं ।

४. भयने वानों का मित्र करेवाले भयने मरुत वा-वर में ह  
 वा जो वस्त्र के छिन्न कमर कमर है व ही मरवावान् राजपूत है ।

५. हे बन्धी ! तु राजपूतों के गुण पूछनी प। उन्हें जब छत्र-पूत  
 मरवा देना । अपनी भूमि के जिसे राजपूत रज के नाव दिखे हुए  
 मरवावान् हो रहे हैं ( रज=रज वीर ) ।

रख कटिया रख-रख हुआ, रज मं मिस्मा बहुत ।  
 बेसी । कीकर धोमनां रज है, कै रजपूत ॥६॥  
 /रज कर-कर रज-रज रंगी, रज बड़े रज-रूत ।  
 /रज सेठी घर ना दिये रज-रज इर्ष रजपूत ॥७॥  
 भा घर सेठी बजली, रजपूतों कुम्भ-राह ।  
 बड़ो पक्ष लायें पिता बड़ो पाप बाह ॥८॥  
 रख सेठी रजपूत-री, वीर न मूखै पाह ।  
 बारह वरसां बाप-रो कहै वीर बंकाह ॥९॥  
 जात-सभाष न जाय रंघड़ जे बोवा दुषै ।  
 आरज्य वाक्कां आब रीठ बजावै राजिया ॥१०॥

१ राजपूत युद्ध में कर-करकर कम-कम हो गये और दूरी दूर रज कमों में मिल गये । हे सखी ! जब उन्हें कैसे पहचानें कि वे रज हैं या राजपूत हैं ।

२ राजपूत युद्ध कर-करके युद्ध भूमि के अक-लोक रज-रज को फिर से रंग देता है और धर्म को रज से आप्लावित कर देता है । वह कटकर रज-रज ( कल-कल ) हो जाता है पर रज घर भी भूमि राहु के हाथ में नहीं जाये देता ।

३ वह वीरों के घर की बगलबगल सेठी है वह राजपूतों के कुम्भ की रीति है—पति के पीछे पिता पर चढ़ जाता और कलवार से कटकर वीर-पति बना ।

४ युद्ध ही राजपूत की सेठी ( व्यवसाय ) है । इस बात की राजपूत, बाकल होने पर भी नहीं मूकता । बारह वर्ष की अवस्था में ही सिंह जैसा वह वीर बाकल बाप के वीर का बड़का से कता है ।

५ आशि का स्वभाव नहीं जाता राजपूत चाहे पुराना हो जाय । हे राजिया ! युद्ध करने पर वह आकर मरकर तलवार बजाता है ।



राम रुहे सुमीब-नै, लक्ष्म केती वूर ?  
 आम्सियां आपी पखी तदम हाथ हजूर ॥१७॥  
 धन-रै बछ पयियाप सटस्य नर भी सांपर्य ।  
 पोरक रै परताप कठय बडप्पण कछिया ॥१८॥  
 छाया-तीतर छार कर हाथ भागै किता ।  
 सिधा-तखी सिम्हर कोइठ आणै, किसनिया ॥१९॥  
 छाया-तीतर छार हर-काई हाथ करै ।  
 सिधा-तखी सिम्हर रमखी मुसकल यणिया ॥२०॥  
 पदमै पोइताइ करदापण हर-काइ करै ।  
 भारी-में संस्ताइ आसू आर्यै रंजिया ॥२१॥  
 बय सयरी ! मोठा गहा गोम्प-री मडिया ।  
 फोइ न मायु काँडरी भइ-री भूपकिया ॥२२॥

१ राम सुमीब से पूछते हैं कि चंका कितनी दूर है । सुमीब उत्तर देता है कि आम्सियों के बिना बहुत दूर है पर उत्तमलीख के बिना हाथ के पास ही है ।

१८, धन के बछ पर तो मूर्ख मुक्त भी प्रभुत्व पाइ कर बैठे हैं पर इ कछिया ! नुस्बार्थ के द्वारा बह्मज्ज प्राप्त करना बहुत कठिन है ।

१९, छाया और तीतर जैसे पक्षियों के बीचें किसी भी व्यक्ति इच्छा करके भलाव ई पर सिधो की सिकार कोई-भेक (बिरया) ही काटा दे ।

२०, छाया और तीतर के बीचें हर कोई इच्छा करव हैं पर सिधो की सिकार पेशना बहुत कठिन है ।

२१, रत्न-जहज में साके समथ हर-कोई सर्व करता इ पर इ रंजिया ! तखवार की धार में धंसते समथ आँखों में धोनु आ जात हैं ।

२२, हे सयरी ! देख बड़े पुर्ण पर गावियों को भक्षियों खग रही हैं । पर बीर को ओरही को घार कोई कभी भी नहीं कछता ।

गड-तिर नाग पाछण मायद-आया हाव ।  
 मड-रै आठे मांरना म्भर न पाले कोय ॥ ३॥  
 भूचड़िया भद जेह्ना गड म भरिया टाट ।  
 गा फु नह गड भनछा भूचड़िया-री म्भट ॥ ४॥  
 राग मिहू राभिया भागा नन म्भदिया ।  
 गड हू अंघा रामयी भदरी भूचड़िया ॥ ५॥

## १-वीर क प्रताप

सिप

मिठे मिष बन माद मिग मिरगा प्रग-वत किया ?  
 बाधतुर जा जाद रद उप-जात राभिया ॥ १॥  
 पपर दुई पद भाग पर द्रव न धारे गोद ।  
 हाथ-जग बजगू दुवा जा प्रग-राज अ-बीह ॥ २॥

११ दुधो वर आक्रमण करेवाले जाहे के बाध मिष हो ज क  
 दे ज वीर को अपहरो वर किया गया क विम कवच दुध का शरीर है  
 १२ हाथ बड़ी हाथस ।

१३ ओरहा से वार चलता रहता ह दुर्म से बेचिको क धाव मर  
 दे, वा जो दुम ओरहा क वन का बड़ी लज मकपा ।

१४ आ क्रिष्णाल से उठताव दुर्ष ह मिषक विचित्रियों के शरीर  
 वन-जो ल करार मिष ह, वी को वे ओरिणी पाव किया ह दुधो के  
 वको व वरको है ।

## २१ क-१ क

१ ह ह जिहा १ व वी ह ह होल मिष वटको वे मिष वा मुक-  
 र्पि ( वटको का शरीर ) वा जा १ क कि वट क विष वरको है  
 दुधो वन वट क क क व वरको है ।

२ मिष क मिष १ व वी हो दुधक मिष वरको हो वरको  
 वरको ह मिष १ ह वी वी के व वी वटको का व वरको है ।

हाथझ बझ निरमै हिबो, सरसर बझो समध्य ।  
 सीह बनेछा संबरै, सीहां बेरा सध्य ? ॥१॥  
 बनेछे हाकां भांगमै, सीह बझीवै सोय ।  
 सुरां जंबी रोबिबै, बझ्यस तेपी होय ॥२॥  
 सीहां बेस-बिदेस सम सीहां किय बल्ल ।  
 सीह बझ पन संबरै बै सीहां-य बल ॥३॥  
 खल्ल पूछल कर जाय, हाथझ बझ मोवाहल्ल ।  
 जे माहर मर जाय, रज-त्रय मझै न राजिया ॥४॥  
 साबूझो किय ही समै छठियो खापिछिया ।  
 तो पिय नह जाबूय तनै हाथझ पर हखियो ॥५॥  
 साबूझो आए समो बिबो न काय गियांठ ।  
 हाक बिबाधी क्रिम भई, पस गाजियां मरव ॥६॥

१. हनेछी के बझ पर उमका हृदय छदा निर्बल रहला है । उमकी परावरी करवे में आई समर्थ नहीं होता । सिंह बनेछे ही बढवे है सिहों के कीम छे छाव ? ( मित्राणो सिहव के बहंन नहीं, जातु न पछे जमाव ) ।

२ जो बनेछा ही जालों के मिलल है वही सिंह कहा जाता है । दुरवीरों को यहाँ बेरा जाता है वही हथपल मच जाती है ।

३ सिंहों के बिजे देख और परदेस होवी जमाव है । सिंहों के कीम छे स्वदेस ? सिंह क्रिम क्यों में जावे है के ही सिंहों के स्वदेस हो जावे है ।

४. यदि सिंह मर जो जाय तो भी वह मिहो वा बास नहीं जाता ।

५ सिंह जिनी कदम दुर्बल और धूला ही छे मो दूधरे के हाथ छे मारे हुने वट्ट को जावे का बिचार नहीं करता ।

६ सिंह छपवे बराबर दूधरे जिनी को नहीं बिमता । परावी हुंकार ( मर्जना ) वह कैसे महन करे ? वह तो पारख के मरजवे पर भी जख मरता है ( पारख को मर्जना भी नहीं सह छकता ) ।

अंवर-री अमाग-मू अर नीज अरंत ।  
 दाह पण अर दुखो अम सदे अरंत ॥१॥  
 अरि ! मर अरहणी, अरि ज रचदियां ।  
 अरह हापत्र गय हले, रंत दुख्या भाह ॥१॥  
 मरि ! अर सीह जण अरि मरि अरि ।  
 अर-विहाय अ-गुरम बाअ्य अरि सिअरि ॥१॥  
 अर अरि बाव गुण, मरि गरी मरि ।  
 अर-अरि अरि अरि अरि अरि अरि ॥१॥  
 बाव गुण अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि ॥१॥

१. बाअ्य म बाव को अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अर अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।

२. अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।

३. अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।

४. अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।

५. अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।  
 अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि अरि ।

मुह म बिबै पर-भारिबै मागा न करै पाव ।  
 सावुखे साभा गुणां बेह किमो बन-पव ॥१४॥  
 मरयो छाजम मामलै, धार-अखी बड बाप ।  
 पकयो खंझ पीवरै सिपां बडो सराप ॥१५॥  
 कुण दूखो पावै, कहो, भग-पठ पावै माग ।  
 अउ-म अखा तमा जिम तोहै उमर-ठाग ॥१६॥  
 भग रिपु नर केई मुखै मुखै कहक भग-राज ।  
 ह्य गज-नाजय सीह-बर तुहु मकरां छाज ॥१७॥  
 जिख मारग फहर बुझो, आगी बास तिख्याह ।  
 ते सब उभा सूझी मह चरसी हिरयाह ॥१८॥

१४ बिह दूखो के दिखे कुछ भोजन पर मुह नहीं मारता ( दूखे का दिखाना दुःख नहीं जाता, अपने पराक्रम से मारकर जाता है ) और न जाने दुखों को याद करता है । इन सबके गुणों के कारण ही बिचाटा के सिंह को बल का राजा बनाया है ।

१५ हे बापू ! सिंह के बिबे मुह में मरना अभिचार्य है । वह सज्जन की भार पर बड़ जाता है । खंजीर में वा पिंजरे में बड़ना (बड़े आकर बंदी होना) सिंह के बिबे बड़ा भारी खरा है ।

१६ सिंह के मार्ग पर दूजरा, कहो कीव चख सकता है ? वह मुह में उल के पाये को कच्चे जलो के समान तोड़ खाकता है ( प्राण्य दे देता है ) ।

१७ कई लोग बिह को युग रिपु ( युगी का खण्ड ) कहते हैं और कई भुज-राज ( जूयो का राजा ) । हाथियों का पारव करनेवाले इस सिंह के बिबे व दोनों दो दिशेयज हृदय में कडा उपद्रव करनेवाले हैं ।

१८ जिस मार्ग में बिह निकला है और जहाँ के वालों को इसकी गंध कम गंधी है उस जग की आर हरिष भूखर भी नहीं जायते के बाव यह-यह ही एयेते, उसकी हरिष कभी नहीं परेंगे ।

परहस जयक पल्लिया कोह न जाय भाग ।  
 सीहां केय छोख-सू मानीजै डर माग ॥१८॥  
 सूतो बाहर नीव सुय सावूमो यमनंत ।  
 बन कांठै मारग यह, पग-पग होल पड़त ॥१९॥  
 निचड़क सूतो केहरी सो मी मिमुहा पांय ।  
 गज-नीका धीर न धरै बजर पड़ै बघ-बाय ॥२०॥  
 पात पणा घर पातम्य भायो यह-में भाय ।  
 सूता महर नीव सुय पोरा दियै प्रताप ॥२१॥  
 मातृ स्या-रा मारजै पा'रा जिहां पड़त ।  
 बिन पो'रै बाहर यसै सावूमो बमनंत ॥२२॥  
 ककयता बूझा मठी है न्ह कोविग-दास ।  
 नहर-सू बहणा नरा ! है पड़णा जम-पास ॥२३॥

१८ मीरज को प्रायज देखने पर भी कोई भाग नहीं जाता । परन्तु  
 विही के बैरी के निशानों को देखकर ही मार्ग में पड़िक भयभीत हो जाते हैं ।

१ बखशान निह अपनी माँह में मुख को नीव मोबा हुआ है । फिर  
 भी उस बन के पास से जा मार्ग बलता है उस पर बलनेवालों के हृदय में  
 १८-१९ पर बबराहट उठती है ।

२० निह निचड़क मोबा हुआ है । फिर भी उस देखकर हाथी  
 चार पैर पर्व नहीं घर बाते मोर उलहे बाव छोड़ जात है । निह को गंध  
 उनका भैयो जान पड़ती है मानो मिर पर बज्र टूट रहा है ।

२१ छेक परों को बतल ( जोय ) बनाकर निह अपनी माँह में  
 बाधा चार मुख को नीव मो रहा । उसका अंगार ही कमल पहरा देना है ।

२२ बिनके वही वही अंगरे हैं उनके समुच्च मर जान दें । बख  
 शान निह बिना बहरे क हो अपनी माँह में रहता है ।

२३ भाय में भरे हुये हीमें सब भाग, यह कोई बजाया वा हुंकी  
 बल नहीं, हे समुच्चों ! निह से बबरा बबराय के चंदे में बबरा है ।

भस्मा पभारो भीषदा । गरुड सिद्ध-में गाठ ।  
 केरु बाध्य कम्ब-री बमठा कीओ बाठ ॥२५॥  
 गाण हतै ठलेख गज । मांमछ बम ठर-सूख ।  
 जागै नह पह-में गिलै सज हावळ सावूख ॥२६॥  
 केरु कुम विहारियो गज-मोठी तिरिया ।  
 जायो काय जल-सू आय अोरिया ॥२७॥  
 केरु हावळ बाध कर कुजर डिगळो कीष ।  
 ईसां नग हर-नू तुषा हांठ किरतां दीष ॥२८॥  
 ओके बम बसंतवा ओवह अठर कय ।  
 सिध कबड्डी मा खड़े, गैवर अस्स भिडाय ॥२९॥

२५ इ बीरी ! शरीर को मिह-बकतर में गन्ध किये ( भारी जोर  
 मिह-बकतर से घेरे हुए ) भले ही सिध से जड़ने को जानो वर मिह को  
 इस जगह की बाध खाटते हुए करता ( उस वज्र भी तुम्हारा कोस बना  
 रहे जब देखो ) ।

२६ हे उदक हाथी ! वहाँ बम में ठप ठप गरजता रह पीर  
 पैशों की जड़ों को उखाड़ता रह, जब जब मिह अपनी मोड़ में बँधे को  
 उठाकर नहीं आता है ( ठप वह भार परजना बंध हो जाता ) ।

२७ सिध ने हाथी के कु भस्वक को पीर दिया जिससे गज-मोठी  
 बिपर बने । जैसा मीठ होया है जानो कयसे बमूख से पीये बरये ही ।

२८ सिध ने जड़ने वंज से बल करके हाथी का डेर कर दिया  
 ( मां हाका ) पीर हथों को मोठी महादेव का गज बर्ष कया भीड़ों को  
 मजदूर दिये ।

२९ ओके ही बम क रहनेवाले होने भी वर दोनों में हतवा बना  
 जलार क्यों ? सिध को कोई भड कोशों में थी वही परीक्षा वर हाथी  
 जान कयसे से भिडता है ।

गैबर-गल्लै गल्लधियो जहं राखै ठह जाय ।  
सिप गल्लधिय ज सई, ता रह अथल विअय ॥३०॥

परछ

मूठप तो मूठा जयै हिरणी जयै सुगठ ।  
पान अककै छ थलै, बागद थलै यह ॥३१॥  
हिरणी फूटरिया जयै बहु पूरणा मुषह ।  
मूठप मांझी पंऊडा घोपर थलै यह ॥३२॥  
मूठप मूठो नी जयै ना पीम्य पहरै ।  
म्यठ तलै रल सावरै मठ जूमजो ज्यै ॥३३॥  
हिरणां साबी सीगही भाजप तजो समाप ।  
सूण छोटी हांतलो दै पज थहां घाप ॥३४॥

१ हाथी के मछे में रस्मी बही रहती है, उसे बकदकर जिधर वहे पीचते हैं उधर ही वह चला जाता है । यदि सिंह हुए प्रकार मछ में रस्मी को सहन कर सके तो वह क्या हम जाग करके में बिके ।

११ गूबरी कुकुर कुकुर जवतो है हिरनी सुन्दर कुकुरों को जम्मा देती है । पर है सुन्दर कुकुर का सुकसा होते ही उठ भागते हैं और वे कुकुर कुकुर के साथ भीरे-भीरे अस्सी से चकते हैं ।

१२ हिरनी सुन्दर कुकुर जवतो है जो सुन्दर होकर भी पक्षियों में भावेसाह ( भाल जये बाधे ) होते हैं । गूबरी बाँके बोतों को जम्मा देती है जो दूर से भीरे-भीरे चकते हैं ।

१३ गूबरी चराह कुकुर नहीं जवतो । वह बीका नहीं बहिनो । वह गूबरी के भावे, जजोव को शम्मा दह जूकैवाले कीरी को जम्मा देती है । ( पञ्ज-काव वा बीबी जादवी जिन वन्या बहिनो है । )

१४ हिरनी के अवे अवे भीम होत है पर वनका रचना भालवे

सूखर सूखे नीह भर, भू-जण फरा देह ।  
 झटो नाह निशाम्या । पर क्क्या पोकर ॥१५॥  
 भू-जण ! मन धारण कर, पाणन वेह निसाण ।  
 मो गमिया को धमिया तो वाग्या परमाण ॥१६॥  
 हेरु परया जण करो हाथी क्क्या सूर ।  
 काहाम्य ! भू-जण मजै भागा भायर वूर ॥१७॥  
 पेरो-पेरो सब कहे मूढे बडे न कोय ।  
 काहाम्य-री म्हाट-नै रहिया सारा जोय ॥१८॥  
 नै-बंतो पाडा-धुरो भेक्य-मल्ल धनीह ।  
 जिम्ह बन सूखर सखरै तिण बन भमे न सीह ॥१९॥

का होता है । शूकरों के बोरी-बोरी हथेलियाँ होती हैं पर वे बड़ी-बड़ी खेवाली को बाल देने वाली होती हैं ।

१५ शूकर घर नींद सोता है, शूकरी पहरा के रही है । वह कहती है—हे मित्रास्तु पति ! उठो, घर को बाँधों के घेर दिया है ।

१६ हे शूकरी ! मन में धारण कर बमारों को बजाने दे । जो गरजने पर यदि वे बजते रहें तो समझना कि घबराहट बजते हैं ।

१७ एक तो दूसरे के (कोय क) को चरने हो और दूसरे कहीं सूँ के उगने पर (संत खे) बाहर निकलते हो । शूकरी कहती है कि हे बड़ी हाँथीवाले बराह ! यदि भागना पड़ा तो पहाड़ बहुत दूर है ।

१८ सब कोई कहते हैं कि 'घेर को घेर को' घर सुह के कामने कोई नहीं जाता । हाँथीवाले शूकर को घर के सारे पक्षे पक्ष रहे हैं ।

१९ हाथी के समान हाँथीवाला भैंसे के समान सुँरीवाला, पृथ्वाण मकड़ और विभिन्न प्रकार के जिन वन में फिरता है वन वन में (नह को (धन के मारे) नहीं फिरता ।

पावर तज बीभो परो भासर श्रीधी डार ।  
आज नही सग अकसो फौजा फरबनहार ॥४०॥

धक्का ( धीरी देस )

धक्का सरीया धक्का ह, की कीजै कैवार ? ।  
जेता भार मझयिदै तेसो मंजणहार ॥४१॥  
आहो-अपुझे क्यू फरै, धक्का बापूहार ।  
आहिण पार पतारसी बझ सामे ओ भार ॥४२॥  
धक्का पचवै रे धणी ! की तुमजो घन भार ?  
आहे घर-रो आपुगो करू पहाडी पार ॥४३॥  
म्यां घर धक्का स-नाय तू होसी नोज अनय ।  
धक्का ऊठरियो तूम धक्का गाहो भरियो आभ ॥४४॥

४ सुघरों के दोष ने मैदान को जोड़ दिया और बहादुर का मार्ग  
के बिना कभीकि धाम उसके साथ श्रीमों को काह देनेवाला एकदम  
महाराज नहीं है ।

४१ धक्का के समान धक्का ही है । क्या धक्का की जान ? जितना  
भी भार होता जाता है उतने का वह खींच ख जाता है ।

४२ बाधारण लोको का लेकर आवा देवा ( इधर उधर ) क्यों  
बहता है ? धक्का का झोलादिल कर । सामन धक्का ( मझ-भूमि ) है और  
राम में जारी बाध्य है । बहो बार उतरेगा ।

४३ धक्का कहता है—हे माजिक ! जबकि भार का दगकर क्यों  
उठान होता है ? मारा पर का भार कंध पर लेकर मैं बहादुरों के पार पहुँचा  
दूंगा ।

४४ हे धक्का ! जिन घर में मान में कुछ नू है वह कभी धक्का  
नहीं हो सकता । धक्का का भार हुआ माफा के वल बल को पार कर गया ।

वस जूता, इस जूतणा, वस पाकसी बईत ।  
 इकम्प भयम्प बावरा लैचातण करत ॥४४॥  
 हूं जाणू भोम्मे मुदा, सखी हुयगो बमा ।  
 बाई विणहिण बाखवू औरु तावण सुमा ॥४५॥  
 सिर नइ सींगी संपरी पगां न ठंटर बंन ।  
 दूय पियतै बाखवू दियो महा-भइ कंन ॥४६॥  
 हिरण

कंन ! करक न छोड़िबे हिरण मिसा पी काव ।  
 आक नटुसै पगून भखू थोड़ी आगळ आव ॥४७॥  
 गरुड

जसवत गरुड न उडवडी ताम्बी विखवू तणेह ।  
 हांखडिया जूता हुनै पंखी अवर पुणेह ॥४८॥

४८ इस बेह माफी में छुटे हुंभे हैं वस छतवेवाले हैं और व  
 मान-घान काखी बख रहे हैं । पर अक बखल बेह के निचा छन चींचला  
 भी कर रहे हैं ( गाफी को डीक से नहीं चींच पाठे ) ।

४९ मैंने समझ कि बखल मर गया इसलिये बाबा बैलों से काख  
 हो गया ( कोई सखा बैल नहीं रहा ) । पर कधी बाबे में अकबर बकूना कि  
 तावडन करके बना ।

५० फिर मैं चींच नहीं विखले पैरों में कपरी नहीं "बी, दूय बीठे  
 महाबीर बखरें मे ही गाफी के बीचे जपना कंन दे दिया ( बाफी का भार  
 उठा दिया ) ।

हिरण

५१ हे पति ! कदक नहीं छोड़नी चाहिये । हरिण कौन-सा भी  
 काखे हूं ? वं घाक के बचे बचते हूं और पणव का भणव करके हूं, फिर भी  
 भी जावेवाले बीबी से जाते जाते हूं ।

गरुड

५२ कपस्त्री मदद ठकवार की लाठी से भी नहीं उचता, दूसरे पक्षी  
 हाक मारते छ ( कपकमरने से ) ही बीछ ही जात है ।

## ६ साधा सिपाही

धरण्य ऋक न कीप सज्जन साहीजै सुपह ।  
 खंड विच्छेद गड खीन रीछ-यानरां राजिण । ॥१॥  
 धरणी गार निछै, साधा मांइ सुरमा ।  
 भगव्या केम मिछै राजां कोप्यां, राजिण । ॥२॥  
 राज रखै तो ब्यार रख मन रखी चाळीस ।  
 दै चाळीसू भागव्या छै ब्यारु चाळीस ॥३॥  
 गांधारी सां जनमिया फुंसा पाँच जणेइ ।  
 दै पाँचू रण जीतिया पण्डित बहइ करेइ ॥४॥  
 सांई ! छेहा भीचइ माछ मुहँगै पास ।  
 म्यां भासमां दूर भय, दूर धर्म भय पास ॥५॥

१ कभी चौकी सभा का कोई कारण नहीं सिपाही मजदूर होने चाहिये । हे राजिण ! इन्हो, रीछों और बंदरों के छका बैसे विच्छेद दुर्ग को जीत दिया ।

२ छिछे के मार से कभी कभी भीष हैं पर भीतर मण्डल गुरुवीर सिपाही हैं । हे राजिण ! राजाओं के कुपित होनेपर विभक्त छिने जाने पर भी वे गड विजयल नहीं हो सकते ।

३ हे राजा ! बहिर रखत हो का चार ही को रखो, चाळीस को मत रखना । क्योंकि व चाळीसों भागनेवाले हैं और वे चार हो चाळीस के बराबर हैं ।

४ गांधारी के लो दुष्टों को जगम हवा और कुम्हार ने पाँच पुत्र जन । उन पाँचों ने ही दुष्ट को जीत दिया । धर्म को भादुभादु किम काम का ?

५ हे राजा ! देखे बार मरहों को मईसे मोछ भा घरने बहा बघाओ जिनक पास होन पर भव दूर रहना है और जिनक दूर होने पर भव निवृत्त रहना है ।

## ७ मूठ

सव-हीणा सरदार मत-हीणा राखै मिनस ।  
 अस बाधो असवार राम रुखाये, राजिया ! ॥१॥  
 सुष-हीणा सरदार, सुष-हीणा राखै मिनस ।  
 जेस सोबै असवार, राम रुखाये राजिया ! ॥२॥  
 नान्हा मिनस नलीक, कमरावाँ बाहर नहीं ।  
 ठाकर जिण-नै ठीक रख-में बबसी, राजिया ! ॥३॥  
 कुमस्य पीठल मूठ ओके रीत कर बाहरै ।  
 हे कम ठाकर हुँत भारतर सखत मैरिया ! ॥४॥  
 कांदा काया कमभनां भी कायो गोदां ।  
 बूक चाखी ठाकरां । पाकतै होदां ॥५॥

१. सव-हीन सरदार अपने वहाँ बुद्धिहीन जादमियों को रक्ता है वह अपने बोड़े के सवार के समान है, हे राजिया ! बसका रक्वता राम ही है ।

२. समस्त ये हीन सरदार अपने वहाँ बुद्धि से हीन जादमियों को रक्ता है । वह अपने बोड़े के सवार के समान है । हे राजिया ! बसका रक्वता राम ही है ।

३. बाड़े बादमी जिण बाकुर के बिन्द रहते हैं जिणके वहाँ कमरावाँ का ( बोलव बीरों का ) बाहर नहीं हे राजिया ! बस बाकुर को बुद्ध के समान पछ चलेगा ।

४. ओके और पीठल को का एक समान समझकर बाहर करता है हे राजिया ! उस बाकुर से ( निर्जीव ) पहाड़ ही चधे ।

५. रातोंको के प्याज काये गोको के को काया ! हे बाकुर साहब ! कम हैजिये बूक होठ बजते हुए आपके हाथों से जा रही है । ( बूक अंग कोल बाकुरों का दिखता था ) ।

## ८ स्वामिमक्त

विषय अपने हाथ-सू तोछे अके करम्म ।  
 सौ सुकरत अके पाछे, अके साम-धरम्म ॥१॥  
 सूर सोइ पिआणिये बड़े भयी रै हेत ।  
 पुरण-पुरखा कट पड़े तोय न छाबै लेत ॥२॥  
 साम अमारै संकड़ा रणपूता आ रीत ।  
 जब लग पायी आपनै, तब लग वृष नचीत ॥३॥  
 क्रियण जतन बन-रो करै पायर जीव-व्रतन ।  
 सूर जतन छ्य-रो करै, बिज-रो घाघो अम ॥४॥  
 पांका भइ यानैत साम-धरम-में सीस बै ।  
 हर-मायम-रै हत कमळ समापै काछिया ॥५॥

१. बिबाठा अपने हाथों से तराजू लेकर लौकता है । सौ पुरख-कार्य अके रहने में और स्वामि-मक्ति दूसरे में ( अकेली स्वामिमक्ति ही क्यों पुरख क्यों के बराबर है )

२. शूरवीर उसी को जानना चाहिये जो स्वामी के सिध बड़े धीर को करकर हुकने हुकने हो जाय फिर भी बुद्ध-भूमि को न छोड़े ।

३. बीरों को यह रीति होती है कि वे स्वामी का सक्नों में बचाते हैं । जब तक ( वृष में मिछा ) पानी जकता है तब तक वृष तिरिचण्ड रहता है ( जब तक बीर जीवित रहते हैं तब तक उनके स्वामी पर कोई आंच नहीं आती ) ।

४. कर्मजु जब भी रक्षा के सिध करन करता है कबर माथों की रक्षा के सिध पर धीर उसकी रक्षा के सिध करन करता है अिसक्य अमन बसने खाया है ।

५. विरुध्दपारी बाँके धीर स्वामि-धर्म ( के वाक्य ) में अरना फिर देते हैं । हे काछिया ! वे महादेव को ब्रह्मा ब्रह्म अथवा सिर भेंट कर देते हैं ( उनके सिर को महादेव अपने ब्रह्मा में वारन करते हैं ) ।

मर सोई, पैवां पई नीछ विषमां बँक ।  
 नैय बचावै साह-रा आप-कळेजो फेक ॥६॥  
 लाग-तयै बस भाष, सिर-साटै-रो सुरमा ।  
 म्यां-रो इक रह जाय राम निमावै राबिया । ॥७॥  
 बिन माथै बाहै इम्मं लीहै करम उबार ।  
 जिण सुरां-रो नांनू छे मर बाधै तरवार ॥८॥  
 पर-बस पाहै भूमता नहि जुहारै भाष ।  
 पणी । इसका रावतां हाथां नीम पंटाव ॥९॥  
 पूजीजै गज-मोतिवां सखी । मरौ मुख भाज ।  
 नाह नि-जोहो आयियो, करे अनाऊ कान ॥१०॥

६. बीर बही है जो मुख में स्वामी ध पहने मिरता है और जब भीख मागता स्वामी के पैरों को धारने को कम्तरती है जब यहका होख में आकर अपना कलेजा बसकी ओर फँककर स्वामी के पैरों की रक्षा करता है ।

७. शूरवीर छकवार के बख सिर के बन्दे की हुई कमाई जाता है ( जीविका के बन्दे म मिर पैदा है ) । उसका इक संसार में रह जाता है । परमात्मा उसकी बात को विमलता है ।

८. जो मिर कर जाये पर भी लोबाधों को कमरते हैं और स्वामी का फल चुकाकर मुख-भूमि में मोठे हैं उन बीरों का स्मरण कर जोहो छकवार बांधते हैं ( जजने को मल्लुप होये ) ।

९. जो बावों ध बँककर कूपते जुझे शत्रु सेवा का बंधार करते हैं और फिर आकर स्वामी को प्रकट करते हैं और जविय जुओं के ( बावों के उपचार के ) जिन्हे रात्री स्वर्ण लपके हाथों से नीम पीसती है ।

१०. रात्री कहती है ' हे सखी ' बीरों की भुजाओं की पूजा कर गज मोतिनों से करनी चाहिये क्योंकि उनसे पहले ही सब काम स्वर्ण पुरा कर दिया और स्वामी को बिना बावों के मुश्किल दौरा जाये ।

हूँ बख्शिहारी साबियां, भाख नह गहयाह ।  
 बीया मोसी-हार ज्यू पासे ही पबियाह ॥११॥  
 मरुपणी ! सतियां मणै जून समापो खेर ।  
 जूना जिय दिन पायसी तिय दिन केय अवैरे ॥१२॥  
 ठग्याबी ! सतिया मणै मेजो जून परां न ।  
 माया जिय दिन मांगया तिख दिन वेर करं न ॥१३॥  
 पणी ! सोख्य जून-री कमी दिखायो काय ।  
 खरां पैबी खीक्यो, म्हारा रो सिर जाय ॥१४॥

## ६ युद्ध

डोक-दमामा वाजिया कसिजय छागा बाज ।  
 सुरां रम्बी-ययामजा कयर तजै पराय ॥१॥

११ मैं स्वामी के खासियों पर बख्शिहारी हूँ जो भाग नहीं गये  
 किन्तु हरे हुये हार के मीठियों के समान स्वामी के पास ही युद्ध में गिरे ।

१२ स्वामिमण्ड बीरों की किर्तों कहती है हे ठगुरानी ! खेर मर  
 जाय हो जिस दिन तुम्ह हमारी जूबियों की साबरबकठा होगी उस दिन  
 हेर क्या ? ( उस दिन जूबियां देखे, पति को युद्ध में भेजते हम हेर नहीं  
 करेंगी ) ।

१३ स्वामिमण्ड बीरों की किर्तों कहती है हे ठगुरानी ! तुम हमारे  
 घर आना नहीं भेजती । जिस दिन तुम हमारे बच्चों के मिर मांगानी उस  
 दिन हम हेर नहीं करेंगी ।

१४ हे रम्बी ! मायारण सूर्य जादे को कमी क्या दिखाती हो ?  
 जादे का बढ़ा देते हैं सबके बढ़के मीरे पति का मिर जायगा ।

१ डोक-मुद्ध मयारे जादि युद्ध के बाज बजने लगे घोर लय क्या जादे  
 लगे । बीरों के जानेंद-बकाहो हो रही हैं घोर कयर बाज जोर रहे हैं ।

और रंग सब रागणी सिंघूरो सुझाव ।  
 सिंधू जब ही गाइयै, पुइछां पकै थिराय ॥२॥  
 छठ पंचावख पचमुल ! बाजा बाजय कम्पा ।  
 ज सरो तो छठ भिदे छे बायर तो भम्पा ॥३॥  
 औरों की फल बागियां कइयो बाग छंझल ।  
 गुहै भली-बा गाजणा तो मायै प्रवाळ ॥४॥  
 भाखर घाम्यां संत-जन बब बम्बां रणपूत ।  
 भेतां छपर ना छै आठू गांठ कपूत ॥५॥  
 जग-मइ वारवां खेत गिय पर फा पाछा दिवै ।  
 रणपूती-भ रेत, राम नचीतो राजिया ! ॥६॥  
 आइव नै आचार, बेम्पां मन आभो बपै ।  
 समझ कीरती-सार, रंग छै भ्यां-नै राजिया ! ॥७॥

१ और सब रंग रागिणियां मात्र हैं, सिंधू राम एक ही राजा है ।  
 जब थोड़ी वर जीव पड़ते हैं तब सिंधू राम जाता जाता है ।

२ हे पवि मुर्खों वाले सिंह (भीर) ! छठ, तुह के वाले बजने लगे ।  
 पवि तू भीर है तो उलझर छपुनों से भिज जा भीर यदि बायर है तो  
 भाग पछ ।

३ भीरों के बागों से क्या काम ? बड़बड़े सिंह ! तू जान ।  
 स्वामी के घरबेबाड़े लगावे छे ही छिर पर (छे ही बज पर) बज रहे है ।

४ आचार के बजने पर हरबर-भण और तुह का बाजा बजने पर  
 भीर उठ पड़ते ह । इससे पर जो नहीं उठते ह वे पूरी तरह कुतूब हैं ।

५ रण क्षेत्र में लखवार की लड़ी बजने पर जो पैर पीके देते ह  
 उनकी राजपूती पर ह राजिया ! तू भिरकल होकर रेत बाछ ।

तुह और सङ्खबजान में बिज का मग बामे की ओर बढ़ता है  
 ( उत्साहित होता है ) भीर जो बस की ही सार समझते है, है राजिया ।  
 जैसे मुर्खों की भाव है ।

कस लाधै जण-कण धरै, कस बाधै करमाळ ।  
परल भवां अर कयरां टहटहियां ब्रजमाळ ॥१॥

आपे ही जाणावसी मछो न होगी घमा ।  
कै मांगण दरसावियां कै ऊजनियां दमा ॥२॥

मासंतो घर-भांगणै, सन्धी । सहलो पाम ।  
तो जाणू पिय मासहणो जं मरुहै सपाम ॥१०॥

हको भ्रत न घर रहे पथ गया समझण ।  
अध घर वंटी नर कबचा कबिया समर सिपाय ॥११॥

सूर न पूछै टीपजो सुगन न देखै सूर ।  
मरणा-नू संगळ गिजै समर चहै मुख नूर ॥१२॥

८. प्रत्येक व्यक्ति तख्तार कमकर बाँवठा है और थकड़कर चलाता है । पर बीरो और कानरो की पहचान कुछ कम नगारा बजने पर होती है ।

९ जो समूह में भड़ होया वह स्कल ही मात्तूम हो जायगा—या जो बाचक के हीकड़े पर या तख्तार के उड़ने पर ।

१० हे छत्ती । गाँव में या घर के आँगन में डाक से फिरता सड़क है, माता गाँव फिरता है । मिरा पठि डाक से फिरनेवाला है वह में तब कमजूसी जब वह कुछ मूमि में डाक से फिरता ।

११ सारे मार्ग कुछ में जाले को धमक रह है, घर घर थोक मी नहीं रहवा चाहता । पथ उनके धमकाने गये कि कमदना उचित नहीं । जब जमीन का बँटवारा हुआ था तब तो वे नहीं धमके थे पर आज जब कुछ में आया है तब धमक रहे हैं ।

१२ बार न तो कबान ( शमाश्रम सुहृतां ) चुपके हैं और न शकुन देखते हैं । वे मरण को संगळ धमकते हैं । कुछ-नूमि में उनके मुख पर तेज चला है ।

सिध न पूछै चंद्र-बद्ध, ना बाखै पर-विष्य ।  
 सदा ठठै बेरखो क्यां जायै त्यों सिध ॥१३॥  
 कछियो परगढ़ आप-री सीत दिसे ह्यरां ।  
 यधै न ऊमर कायरां, घटै न गुमारां ॥१४॥  
 कटकां तबल राहबिया होय मरवाँ हल ।  
 बाज करै मर जीपदा । वैस करै पर पल ॥१५॥  
 अके कर पैस बिलगिबै अके कर समाय बाज ।  
 मय कह जागधपुर बखडु बाज करै, भिड़ राज ॥१६॥  
 अण-विमपासी जीपदा । बायर । कबूँ दूँदूँ ?  
 मरसो कोठै सोह-रै ऊबरसी चोई ॥१७॥

१३. सिध न तो कभी चन्द्रमा का बन्ध पूछता है और न पर-  
 वी जानता है । वह तो सदा ठठै-ठठै ही उठता है और जहाँ-तहाँ  
 वहाँ उसे सिद्ध प्राप्त होती है ।

१४. कवचावलय अपने सारे साधियों को लीज देता है कि ।  
 की बल वह नहीं जाती और युद्ध में ऊपेबाध कीर्ति की उन्नयन  
 जाती ।

१५. चौकों में बगारे बन्ध रहे । मरहों में ( और दुश्मनों में )  
 मय गया । छत्रवा बहती है कि है जीव । रण में घबड़कर मर जा और  
 की कायला कबली है कि ( भागकर ) पर चला जा ।

१६. अक और जीवम अपनी और जीव रहा है दूसरी तरफ  
 अक १ और । जीवम कहता है कि ( छीड़कर ) दियो बले चलो पर  
 कहते हैं कि है १२ । युद्ध में भिड़ जाया ।

१७. है अकिरासी जीव । है कायर । इस प्रकार क्यों भागता  
 यदि मरना होगा तो छोड़े क बद्ध काटे में भी मर जायगा और यदि न  
 होगा तो घरे नाम भंडान में भी बन्ध जायगा ।

[illegible]

होस घसकटै हल मिटै बजै सुहस उहस ।  
अयर कपै पक्ष पड़ै मरै स सूर निरुह ॥२३॥

आवृष मड़ै अनेक भक्ष भाजै केता भरम ।  
टीकम राखै टेक भंस धरणा-री, मैरिया ॥२४॥

सूर उपाकै छर बजै सूर अनोखो चाल ।  
सूर डाख फर रागिया सूर जगत-री डाख ॥२५॥

भक्ष रज पहिया कट पड़ै पावो मुड़ै न मेर ।  
सूरज उगा आधमै पाखा फिरै स फेर ॥२६॥

रहै कित्ता दिन पायुषा, धाखर करै पयाण ।  
पर कायर पर जेमही सूर्य रै तन प्राण ॥२७॥

२३. बघारे बज रहे हैं भीजें भिख रही हैं बीर प्रसन्न होकर हैं  
रहे हैं कायर काँव रहे हैं घब गिर रहे हैं और सूरभीर मर रहे हैं ।

२४. जहाँ जगैको राख हूँ-हूँकर गिरते हैं और कितने ही को  
भरम प्रोकर भाग चलाते हैं उन मुद् में है भरिवा ! अमकाम ही है  
निभाते हैं

२५. बीर लुकी छाली क घाय कइले हैं । बीरों को जाना हो किरान  
होती है । बीर अपने काम काज कब रजत हैं ? बीर स्वयं जगत को हा  
( रजक ) हैं ।

२६. मुद् के बिजे चढ़ा हुआ बीर मुद् में भरकर गिर जल  
पर बीजे नहीं औरता । लूँ उहस जाने क बाद भरत हा जाता है व  
कारिब नहीं औरता ।

२७. कायर क पर भूमि और उमी प्रथर बीरों क शरीर में जल  
कितने दिन अमकाम बने रहते हैं ? आविर के पाइकर पक्ष ही जाते हैं ।

[सह नृ गुरुभ्यनुमतिन, निमज्जति नृगुण-युत ।  
 नमो नमामि माह विन पाद विन्य रजपूत ॥ ८॥  
 एव भावा नैना दुष्ट मध्याप्य दूषाह ।  
 नृप दुष्टा नृ भविषा नृ भविष्य सुवध ॥ ९॥  
 दोषा । य इ री मय्यो ज्ञान्ता पीर ।  
 नृप रैमपू माह विन भाव नृ री मतीर ॥ १०॥  
 कीर्ति वा नृप-भक्ति विन नैव गुरुदाह ।  
 पाप नृ बाधे दारुणी दारुणी नमो नमो ॥ ११॥

१० कीर्ति पाद

एव गुरुता नृप-युता मृषा नृप-युत ।

नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१२ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१३ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१४ नृप-युता

१५ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१६ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१७ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१८ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

१९ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

२० नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

२१ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

२२ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

२३ नृप-युता नृप-युता नृप-युता नृप-युता ।

प्रीति नमाङ्क देवियो करणो सत्र सयह ।  
 परपत्नी पण परप्रियो धोखी उमर नह ॥ १॥  
 मैं परपत्नी परप्रियो तोरख-री ठणिया ।  
 पर-पण छांकी पैरता पैरै पण जमिया ॥ २॥  
 मैं परपत्नी परप्रियो बागा माह मनाह ।  
 लायो साव दिकापकर धोखी उमर नह ॥ ३॥  
 मैं परपत्नी परप्रियो सुरत पाड सनाह ।  
 धर खडसी, गुडसी गर्धव मीठ पडेसी नाह ॥ ४॥  
 मैं परपत्नी परप्रियो मूछा मिडियो मोह ।  
 जासी सुग न धोखो जासी बड संजोह ॥ ५॥

२. घर की परीक्षा यह दे विवाह होने के समय ही कर ली ।  
 घरवाले मुकावर देखनेवाला ( जमाना ) और शत्रुओं को विजय कर  
 वाला है और वह बोली उल्टी लिखाकर खाया है ।

३. मैंने विवाह के समय तोरण की छतियों पर ही अपने पति के  
 परीक्षा कर ली कि यदि बरबादी करवाही कभी बाँहों की बगिया वहनेही है  
 जैसी बगिया और भी बहुत-सी छिया पहनेगी ( यदि बरबादी विपद  
 होगी तो बैरियों की छेकड़ों छिया भी बिजवा हुने बिना रहनी—वह छेकड़ों  
 बैरियों को मारकर मरेगा ) ।

४. मैंने विवाह के समय देखा कि पति ने घर-बैठ के बीच कचर  
 पहन रखा है । तभी मैंने परीक्षा कर ली कि वह अपने छात्र बोली बड  
 लिखाकर खाया है ।

५. विवाह के समय ही पतिव्रता पाकटि और कचर को देखकर मैंने  
 पति की परीक्षा कर ली कि कुछ मैं बसता यह कइया हाथी गिरने पर वह  
 कडिगता छे गिरेगा ।

६. मैंने विवाह के समय देखा कि मोझे मीर को छू रही है । तभी  
 मैंने परीक्षा करली कि वह भोकेला स्वर्ग नहीं जायगा, सेवा छोड़ कर जायगा  
 ( जावेकों को मारकर मरेगा ) ।

મેં જાવંતી જાગિયા માદ મરે રૂઝ માદ ।  
 હો ન રાગ-મેં જોરબાં વરના જા પદાગા  
 મેં જાવંતી જાગિયા માજન માપે કમ ।  
 મળ-મેં રૂઝ યાવંતી જાગિયા રા જાગાયા  
 જા ગુનાય પોર-નૂ પમીં પર મોગ ।  
 જરૂર યાગા જાગિયા જાગરૂર જા ગુનાય ॥૧॥  
 જાગ જાગા જાગ જાગિયા જાગરૂર પોર ।  
 જાગ રૂઝ જોગા જાગો ! માટે જરૂર જોગા ॥  
 જાગો ! રૂઝ જે જાગરા જાગો જા જાગો ।  
 જાગ જાગ જાગ જાગો જાગો જાગ જાગ ॥૨॥  
 જાગો રૂઝ જે જાગ-તી જાગ જાગો ।  
 જે જાગો જાગ જાગો જે જે જાગો જાગ જાગ ॥૩॥  
 જાગિયા જાગ જાગિયા જાગ જાગ જાગ જાગ ॥૪॥

सखी ! हमीजै कंठ-री बरसां जाग आई ।  
 पर-ब्रह्म ऊर्मा नह पड़े, पर-ब्रह्म जीव पड़े ॥१३॥  
 नाह न थायी नीह-में ओड़ी ठोड़ अंगूठ ।  
 सो सखनी ! किम बसुसी पर-ब्रह्म मिदियां पूठ ॥१४॥  
 घर पाड़ो, पिय अपपम्मे, पैरी-वाकै नास ।  
 निव-रा बाजै डोछड़ा पद चुइसी-री आस ? ॥१५॥  
 पैरी-वाकै नासवा, सदा सगळ्ठे जाग ।  
 हेखी ! कै दिन पाण्यो जूवा, भाग, मुहाग ? ॥१६॥  
 घर-घर बैर मिसाधिया दिन-दिन छू बै भाव ।  
 हेखी ! सो भय हेख्यो, जकै न धाम किबाव ॥१७॥  
 सखी ! सरोसो नाह-रो सुनो सखनम जाय ।  
 पूछ सुगंधी फौज पर आसी भंवर-कडास ॥१८॥

१३ हे सखी ! मेरे पति की एकबार आकाश में बरसी है ।

सखु-सेवा के लिये रहते नहीं गिरेगा सखु-सेवा को जीतकर गिरेगा ।

१४ हे सखी ! पति नीह में भी अंगूठों की अपह लगी नहीं जाय  
 वह सखु-सेवा से मिथवे घर पीठ कैदे देगा ?

१५ घर में बीजा है पति स्थिर नहीं रहने वाला है बैरियों ।  
 मुहल्ले में निवास है छदा-छदा डोछ बजते हैं । जूबों की ( मुहाग की )  
 आवाज कम तक ? ( पति के जबिक दिन जीवे की अंभलना नहीं ) ।

१६ सखियों के मुहल्ले में निवास है सदा एकबार आकाश में  
 है सखी ! जूवा आग्य और मुहाग कितने दिन के सहमाव ? ( जबिक दिन  
 रहनेवाले नहीं ) ।

१७ घर-घर से बैर बसा रखा है, दिन दिन पावे मारता है ।  
 हे सखी ! मेरा पति जकैना है फिर भी घर के दरवाजे बंद नहीं करता ।

१८ हे सखी ! घर को सुना मठ समझ, सुखे पति का मरोमा है,  
 उल्ला हुआ सखु सेवा घर ओछे आचमा कैदे पूछ को सुगंधि घर भीता  
 जाय है ।



घोड़ा हीस न मस्तिषा पिय ! नीरवो निवारि ।  
 पैरी आया पाबूखा बल-बैम ! तूम दुवारि ॥२४॥  
 छठ अचूम-बोखसा ! सार परवै मर !  
 घोड़ा पाकर घमघमी सीरू रंग दुवारि ॥२५॥  
 छठ बरंगा-बोखसा ! बामय आलै कंठ !  
 बँ हस्ता वो ऊपरै हूकम-कमल दुवारि ॥२६॥  
 पय आलै, आगो बखी ! हूकम-कमल हथार ।  
 थिय मृता रा पापूखा मिथय मुखावै बार ॥२७॥  
 पंथ मिहारै पाबूखा गीध मिहारै मैथ ।  
 अमल कबोखी कमलै नीर निवारो मैथ ॥ २८ ॥

२४ हे पिय ! घोड़ों की बड़ हिमहिमाहट भली नहीं नीर को रू करी । हे बेना के स्तंभ ! तू तुम्हारे द्वार पर महमाव होकर जा पहुँचे है ।

२५ हे जगूक बोल बोलवेनाले ! बड़ो । हे नाम ! तुम्हारी पत्नी कहती है कि घोड़ों की पाकर बड़ उठो है पीर मिथर रंग पाया जाने जागा है ।

२६ हे बहमे (बिबट) बोल बोलवेनाले ! बड़ो । हे पति ! तुम्हारी पत्नी कहती है कि बड़ बसता तुम्हारे ऊपर है बल महार कोखाहक हो रहा है ।

२७ बली कहती है कि हे बति ! बामो । हमार अमार का कोखाहक हो रहा है । बिना आँखें हुये महमाव ( तू ) बाहर मिथवे को दुका रहे हैं ।

२८ महमाव ( तू ) तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं, पीध आकमल को देख रहे हैं कबोरो में अफीम उड़क रहा है, बाकों के नीर को रू करी ।



घोड़ा हीस न मस्त्रिय  
 बैरी छाया पावुछा रख  
 छठ अचूक-बोझया !  
 घोड़ा पायलर समझमी  
 छठ अहंग-बोझया !  
 भी हस्ता वो झरै  
 बण आसै, जगो धरणी  
 बिख नृता-य पावया  
 पंख मिहारै पावया  
 अमल कचोळी छम्छै

१४ है मित्र ! घोड़ों की प  
 क्यो ! है सेवा के स्तम्भ ! कहु त

१५ है अचूक बोझ  
 कदली है कि घोड़ों की प  
 जमा है ।

१६ है वेदों (   
 पत्नी कदली है कि  
 हो रहा है ।

१७, पत्नी  
 एक हो रहा है ।  
 रहे हैं ।

१८, म  
 एक रहे हैं, क



ईस ! पया जे आसता, तो क्षीजै सिर तोड़ ।  
 बड़ ओषण पय-रो पया पदसी पैर बड़ोड़ ॥४४॥  
 सखी ! तुम्हीया बत नै पेरया पया जयाइ ।  
 सिर मोरां, मुय मंगयां पैरी चहुं बज्याइ ॥४५॥  
 बित मोरां बत मंगयां पैरी जाग-मज्याइ ।  
 सारां-नै चूसापसी जे कमो कुसज्याइ ॥४६॥  
 मूक अर्चभो हं सखी ! कंठ बज्यावू कीस ।  
 बिन मायै बाहे दयां आंस हियै को सीस ॥४७॥  
 ओर चहे गह आपरा नीसरणी-बल नीठ ।  
 बजको पय पूगो छठे, मांझ मेल्हे पीठ ॥४८॥

४४ है ठकर ! यदि बहुत जरूरी है तो भले ही सिर बटारकर भी  
 जीविये । इस पया का पति यकैले बड़ से ही पैर का बड़या से सेया पैर  
 लय गिरेया ।

४५ है सखी ! तुम्हारे पति को बहुत से ओयो पै पेर किया है—  
 सिर को महाजनों के मुय को बापलों के ओर पैरों के चारों ओर से ।

४६ मेरा बति यदि कुसज्याता-पूर्वक रहा तो महाजनों को पय  
 बापलों को राम और शत्रुओं को चहुय की बजायाई देकर सबको कुस  
 देगा ।

४७ है सखी ! मुझे क्या भयत हो रहा है । बति का बजाव  
 किस प्रकार करे ? वह बिना सिर के ही ( सिर कटकर गिर जाने पर भी )  
 शत्रुओं को दवा को काट रहा है । वह उनको देखता कैसे है ? आँखें उल्टे  
 हृदय में हैं या सिर में ?

४८ हमारे लोग किसी पर बदेओ के सहारे से ओर बड़ी कमिया  
 क बाव चढ़ पाके है । वरन्तु मेरी बराबरी बति भिजे पर सहज ही भ  
 गया । जैसा करने से उधरे बगदर को भी ॥ १६ ॥



हेली ! पीपर बेलियो, खेक्य एठ सुहाग ।  
 पर आयां धप नाणियो बुझावूय सुहाग ॥५४॥  
 पीरपियां सुतो धपो कुट्ठरै पञ्जी ! काय !  
 बेसीबै मुक हीह-रै सुख हो अम सदाय ॥५५॥  
 पोद बव्धै पौडियो गियतो फौज गरीब ।  
 दोय बही तक बीम-नू बैरी आय लकीब ॥५६॥

### ११ वीर पत्नी

मलयालम घूसै लकी बायल नह गिरल्लब ।  
 बायल सली ! सो इ गहो मिय भव वषव कहाव ॥१॥  
 नह पकोस अयर नरा हेथी ! बास सुहाव ।  
 बम्बिहारी अण देसबै माया मोल विकान ॥२॥

११ हे लकी ! पीपर में ही एक रात सुहाग देखा बा इम कर  
 जाके पर ठी दिया के उलरोलर हुहाग ही देखा ।

१२ हे बन्धी ! रात भर पीका से व्यथित रहने के बाद प्रमाथ के  
 अमय मेरा पति कुछ अमयस्त हुआ सो रहा है । तू क्यों रो रो कर सौर कर  
 रही है ! प्रमाथ के दो पहरों को छोड़कर क्या मैं कभी येन जाती हूँ !

१३ कछु सेवा को हीन देखकर कहीं राजि के बोले बहर हो पाया ।  
 छो बैरी बकीब ! ही कही भर तो जिह्वा को चारम दे ( नद प्रहवाई बजाना  
 बन्द कर ) ।

### वीर पत्नी

१ मिय दुर्ग में मलयाले वीर नहीं घूमते और बायल वीर नहीं  
 कराहते, हे लकी ! उध दुग को बचा दे जिह्वा के वीर बिचारे कहे जाते हैं ।

२ हे लकी ! कबल पुहनों के पकोस में रहना चप्पा नहीं लगता ।  
 मैं उध देख पर बम्बिहारी हूँ जहाँ मिर मोल विकते हैं ( जहाँ  
 पिरों का बेम-देव होता है ) ।



क्या ! रख-में पैसठां तू मठ प्यपर होब ।  
 तूम्ह छात्र, मुम्ह मेहणो भलो न भाटी कोब ॥५॥  
 सूर ! रख-में प्यपर होहा करो निसंठ ।  
 ना मुम्ह बहै रंभापणो ना तुम्ह बहै कम्ह ॥६॥  
 भाम्म मठ तू कंबका ! तो भाम्मे मुम्ह लोब ।  
 मोरी संग-सहेछियां ठाम्मी है मुख मोब ॥७॥  
 कंय ! पराब गोरपूँ भाजै साय गंधार ।  
 संखस छागै दुहु कुम्ह मरखो जेम्ह बार ॥८॥  
 कंब ! छलोजै जमय कुम्ह, माह पिरंती छांइ ।  
 मुद्रियां मिम्हसी गीरप्यो मिम्है न पछ-री बांइ ॥९॥

८ हे वरि ! तुझ में जैसे समस्त तुम अक्षर न हो जाता । तुमको  
 कलम योग्यता पड़ेगी, मुझे लाने तुमसे पढ़े, कोई भी छात्रा नहीं करेगा ।

९ हे वीर ! तुझ में अक्षर निरलंक होकर हथियार ब्रह्मकी शिखर  
 न मुझ विधवावन मल्ल हो और न तुम्हें कर्मक ।

१० हे वरि ! तुम तुझ में भागना मल । तुम्हारे मलमे से मुझे  
 कर्मक छमेगा । मेरी छात्र की सखियां मुझ चिरा-चिरा लखियां ब्रह्मदेवी  
 ( मेरी हूँगी उदारोंगी ) ।

११ वरि ! परम्यो बुद्धभूमि में जो भाग्य है वह गैवार है । इसमें  
 ( मातृ-कुल और पित्र-कुल ) दोनों कुलों को कर्मक लग्य है । मरवा  
 जानिअ भव ही बार होता है ।

१२ हे वरि ! दोनों कुलों ( को शक्ति ) को छोड़ देखा । जीवन  
 जे चिरको चिरकी जाया है उसको छोड़ मत देखा । वरि औरकर जा गये  
 जो बोले मरव फिर रखने के जिसे तुम्हें कठिना हो मिलेगा, तुम्हारी  
 शिखरमा को बहि नहीं मिलेगी ।

'तु गाय सब गद-गद, यही भवानक आय ।  
 द्विपु-गायी सिपखी भीषी तेग छटाय ॥१३॥  
 यहाँ चरगा सीगिय भाभी ! किसई धम ।  
 सब सुखीने पारख लीने हाथ लगाम ॥१४॥  
 भाभी ! ई हावयां मदी भीषां रट-रट ।  
 ब मनपाप पापुयां मदी भयल बटुक ॥१५॥  
 यही पर-रुल मोयने दग सगो ! मज्जमस्त ।  
 भाभी बहा नुमन पर नीने पर नखुदकन ॥१६॥  
 भाग्य रन सुखक पल न स्वग आवां पाइ ।  
 पराधीन-वा पुनरुज जानी गाय दिवाइ ॥१७॥

१३. वा के सब काम गद ( वाकि भाव ) में चल गये । वीरु व  
 पारख कचको के कामकाय कर दिया । वह देखकर विहारी को वही सिद्ध हो  
 'विश्राम को दया दिया ।

१४. हे भाभी ! बाद वा चरवा किन्ना किन्ना आया था ! कचकी का  
 मना मुनासी वह रहा है । लगाम दमन में लो ( कचके को कचका हो  
 गया )

१५. हे भाभी ! मे हाथ लो कचका ! मज्जमस्त वह चरवा हुआ । भाग्य  
 मज्जमस्त कचकी वा न कचकाओं को मज्जमस्तमो काजिव ( कचको को  
 मज्जमस्त दिया )

१६. हे भाभी ! देखो ! कचकी का न कचका । न कचकाओं में न कचका है ।  
 न कचका है कचका न कचका है कचका है कचका न कचका है कचका है कचका है

१७. वा के ( वाकि को ) भाव के कामकाय वीरु व न कचका  
 कचका हुआ वीरु व दिया दिया कचका वीरु के कचका वीरु व कचका  
 कचका वीरु कचका कचका व वीरु व कचका कचका कचका कचका

धन विधमा ! तो देखायी धन तो हाथ पिसेस ?  
 परस खिसयो भव पोच-सू मरस खिसयो दित बेस ॥१८॥  
 बह जगज्जे हेक पस बीजै पर अभिषार !  
 बसि बिहुं पस जगज्जिया बह-सुखी बखिहार ॥१९॥  
 हे सिपसियां आज छग निरबीजां घर मांय !  
 बंस-जगज्जक पाहुकी मिलै मूप्पो मांय ॥२०॥  
 जे मूपा तो अस्त भला जे बरपा तां सार !  
 बिहुं पकारां ह सप्री !, मादस घुमै बार ॥२१॥  
 रण रहबिया न रोह रोह स रण जेहे गया !  
 हज घर पाही रीठ है, मरणो मंगल होह ॥२२॥

१८. हे विधाता ! तेरी कलम जग है तेरा हाथ बिसेस रूप से ब  
 है जो तुझे मेरे जग में बीर बलि के साथ विधा होना बिधा बीर हेक  
 बिसे मरना बिधा ।

१९. बह जेक बह को पकटित करण है बूधरे को बंधेरा ही रण  
 ह । में जगज्जुखी ( बीर नारी ) पर बखिहारी ह बिसे पिपुवच को  
 रणसुरण दोनों को जगज्जक बजावा ।

२०. सिपसियां (बीरांगनायें) आज तक भी हैं दुखी उनके की  
 करहित नहीं हो गयी है । बंस को जगज्जक करनेवाको बीर-बजावा  
 लावारज अपवित्र में मिथानी हैं ।

२१. पति यदि अपने लक्ष्य को बहुत जल्दा घोर बहि बह गये ह  
 लक्ष्य घण्टा । हे सप्री ! दोनों ही पकार के द्वार पर आज बजेंगे  
 ( मंगलोल्लास होने ) ।

२२. युद्ध में आने लगे युद्धों को मर रो, बनको रो को युद्ध बोधकर  
 भय लगे । हज घर में को बही रीठ है कि मरना मंगल लक्ष्य जग है ।

ਨਿਰਾਸ਼, ਨਿਰਾਸ਼ੀਆਂ ਜੋ ਬਧੁ ਆਧੈ ਧਾਮ ।  
 ਜਨਮ ਪੂਰੀ ਸਾਧਨੁ ਹੋ ਧਰਮ-ਰੀ ਯਾਮ ॥੨੩॥  
 ਰਵਨ ! ਆਜ ਨ ਸਾਂਝ ਵਗ ਘਲ ਸੁਖੀਐ ਅਗ ।  
 ਧਾਧ ਆਧੈ ਯਾ ਧਯੋ, ਤਾ ਧਯ ਹੀਐ ਰੰਗ ॥੨੪॥  
 ਏ ਪਾਧ ਆਧ ਦੁਯੇ ਆਧੀ ਨਾਦ ਧਰੇਦ ।  
 ਯ ਪਾਧੀ ਧਧ ਯੋਧੁ ਫੁ ਆਧੀ ਧੁਕ ਧਰੇਦ ॥੨੫॥  
 ਰੇਦ ਪੂਧੈ ਧਾਧੀ ਪਰੇ ਮੂਧਯ ਫੇਰ ।  
 ਰੇਦਿਧ ਧਾਧੀ ਹੇਧੀ ਨਧਧ ਫੇਰੇ ਨਾਧੇਰ ॥ ੨੬ ॥  
 ਯ ਧਧ ਧਧਧ ਨਾ ਧਧੀ ! ਧਾਧਾਧ ਸਧ ਧਾਧ ।  
 ਨਿਧ ਧਧਧ ਨਾ ਨਾਧ-ਧ ਧਾਧ ਨ ਸੁਧੀ ਰਾਧ ॥ ੨੭ ॥

१३. यदि विद्या प्राप्त होवे या विद्या विमल पावे यदि घर जादवा  
मन्दर या सुदिशि को जादवा त या जीवा कक कनी मे पार  
ले ।

૧૭. હે વાદવ : જાક પેઠો એ સદેશો મન પાતા વડા મુદ્દ મુજા  
કે હે : જરિ હોતા જરિ મજબાદ એ ખાદ વડા વડા મજા (મજબાદ એ  
પ્રજા) ના રિદ મુદ્દ સદેશો રખાતા :

૧૨. એ જાણે બીજા સ્વર્ગ જાણે—દુઃખ ના ૧૧ દાખા બંધિ સુધી જાણે  
જાણે ના. બંધિ એ જ બો જાણો જાણાઈ દુઃખ ના ૧૧ જાણે જાણે સુધી  
જાણે (જાણે જાણે જાણે જાણે જાણે જાણે) :

੨੬. ਪ੍ਰੇਮ ਤੇ ਸਰਬੇ ਵਾਹੀਏ ਹੈਂ ਅਰਥ ਕੀ ਸਰ ਤੋ ਕੀ ਭੀਐ ਅਰਥ  
 ਹੈ ਕੀ । ਭੀਐ ਤੇ ਅਰਥ ਕੇ ਸਾਰ ਅਭੀਐਥ । ਇਸਤੀ ਯਾਤ੍ਰਾ ਹੈਂ ਵਧ ਵਧੀ  
 ਤੇ ਸਾਧਨ ਅਧੀ ਪ੍ਰੇਮ ਕੇ ਭਿਅ ਅਭੀਐਥ ਅੰ ਅਰਾ ਯਾਤ੍ਰੇ ਸਾਰ ਸਭੀਐ ਭੀ ।

[illegible]

ऊभी गोल बबूंसियो पैसां-रो दळ सर ।  
 पक्षियो बबू सुबियो मही धन लीयो लाजरे ॥२८॥  
 संवधि ! और निसंक मन, अंगक-एह म बबू ।  
 पण बबू-रो किस पेकसी मैग बिपटो नह ॥२९॥  
 कासी ! बूढ़ी की तजे मंगल-बेध रोह ।  
 यमन-जायी बीररी सरा-सुहागन होह ॥३०॥  
 डाख बबंतों ह सररी ! पति आपो मो लेन ।  
 पागो डोखा हू बली पति-रा बबूमे बब ॥३१॥  
 साई-सू मांजी रहू पाज पाज रे डात्र !  
 पंचन-में मोरी पत रहे, सगियन-में रह बोस ॥३२॥

२८. अरोखे में से बड़ी हुई बीर बानी से बही से देखा कि बडा का एक छेर हो रहा है । उसके समक बिबा बि मेरा पति मारा बडा ) वी के बुद्ध-भूमि में मिरके का उमने स्माचार बही सुना, पहले ही मतो होने बिने मारिबल बाप में से बिबा ।

२९. हे बीबा ! बति के नुपों अनी को मिरचक होकर प्या, पर मेरी को और मल जा । मेरी के नह होने पर मेरा पति अपनी बिबलता के ल ( की पति ) को लेने देवेगा ?

३०. हे बाम्बो ! मरन को मंगल-बेडा में रो-रोकर पतिव्रता को किस बिने उतारती है ? रात्रन की कन्हा मरा सुहागिन बोली है ।

३१. हे मयी ! बिबाह के समय बीख बमके दुध पति मुझे लेने छया बा । पति का बढका बुझने के बिने पात्र में बीख बमके दुधे ही ( बले होने ) का रही हू ।

३२. हे डोख ! बज को ! बज में पति के पति नहीं रहू, वचो मे को बिपट रहे और मलिवी में मेरी बाप रह जाय ।

१० ! भेक संसरो वाचन नै पढ़िया ।  
 अथ पात्र न पत्रिया टामक टस्टहिया ॥१॥  
 छे गुन पाक रगनै बटीय गुन राय ।  
 रागुता पकी एही पकता आग हाय ॥२॥  
 पत्रिया ही भय अगन रे मित्र समाधी लेठ ।  
 मोहन बेटी अगन मित्र, धन बटी भय दल ॥३॥

## १२ - पोर माता

दया न दयो आपकी त्य सता भिड़ जाय ।  
 दून भितारी पकती माय-बहाई माय ॥१॥  
 मुन पत्रिया दित दम रे दारुना बंधु-भाम्भ ।  
 माय दारुनी जयम द जितरी दारुनी आज ॥२॥

११ हे पत्रिका ! जब भरेला मा पत्र को कदवा—तो जग के  
 भय पावो वही वही या वा जात्र मा जिम हाथ बज रहे है ।  
 १२ बेटी के हा गुनो को देखकर मे वन पर मेकनो गुनो का  
 प्येदाग का है । विहाद के समय वह वा के न है री वा जग के क समय  
 पने पक रही है

१३ मित्र को माये के वाद को पत्रि न दारुन भय नि भय  
 है, वा के। न के को पत्रि के का देती । कल है दारुन व कलेव ।  
 मित्रको—मिद को न के वा जग के वही का, माये काये है ।

## १२ हीर का ७

१ कल को पत्रि को ही दारुन पद पत्रि के निर कल—दम  
 जग के कल पत्रि के ही दम को माये का दारुन निवाये है ।  
 २ के। दम के निर का कल । वह जग के कल का हीर दम ।  
 कल के कल दम कल के निर वही दम को निर का दम के है ।

सुत ! करजे दित देस रो मरजे लागी-हूँ !  
 बूढ़ापा-री चाकरी भर मर पाऊँ पूत ! ॥१॥  
 ललम दिखायो ललम-दिन, परज दिखायो आम ।  
 बेटा ! हरल दिखावजे मरण देस-रै कम ॥२॥  
 आज घरे सासू ! कहे, हरल अचानक काह ।  
 बहु बझेबा हूँसै पूत मरबा काम ॥३॥  
 सुन मरियो सुत ओकसो सासू प्रभजै पार ।  
 सो लखियो अयर बयो बेटी ! बळ्ख निहार ॥४॥  
 सासू आटी ठेढ़ी की मणिदारी कम ?  
 सुन मरोखो पूत-रो बूढ़ा-रो जम-नाम ॥५॥

१. हे पुत्र ! देस का दित करना, लकवारी से कलहर फिर जाता ।  
 बेटा ! लला करोमे लमी में बुझाये की सेवा भर बाँटनी ( लमी समझौती कि  
 तुमने बुझाये में मेरी सेवा को ) ।

२. हे बेटा ! जन्म लेकर तुमने जन्मोत्सव का दिव दिखाया । विवाह  
 करके आज विवाहोत्सव का दिन दिखाया । हे पुत्र ! देस के लिये मरण  
 मरणात्सव का दिन भी दिखाया ।

३. हे सास ! कबना आज घर में अचानक काहे का दर्द है ? लाभ  
 उठार देती है कि मेरी बुझवपू काम लती होने की उलझिज ही रही है और  
 पुत्र मरने को जा रहा है ।

४. पुत्र जकेबा ही मरा ( बहूओं को मार कर नहीं मरा ) वह बात  
 सुनकर सात बुझवपू से कहती है—मेरा बेटा कलर हुआ, हे बेटी ! उसके  
 साथ लती होने को रोक दे ( लती होने का विवाह जोत है ) ।

५. आज बुझवपू से कहती है—मणिदारी ( जुहिवारी ) को किस  
 बिधि बुझाया है ? मुझे अपने बेटे का मरोखा है कि वह पृथिवी का सम्राज है  
 ( मरा जायता और मुझे पृथिवी नहीं रहने देता ) ।

मुन पारा रज-रज धियो बहू बल्लेषा जाय ।  
 कनिषा डंगर छाज-न्य सासु-वर न समाय ॥८॥  
 हूँ बलिहारी राखियां जिज जाया रजपूत ।  
 भय-हूँती हूँती करै सै बाठा-न्य सूत ॥९॥  
 हूँ बलिहारी राखिया जाया बंस कटीस ।  
 सर सल्लो जून छे सीस करै बगसीस ॥१०॥  
 हूँ बलिहारी राखियां, यास बजायै सीह ।  
 बीर जमी-न्य न जयै मांक-डीठा सीह ॥११॥

### १३—वीर बालक

रज सती रजपूत-री बीर न मूलै बाळ ।  
 बाळ परसा बाप-न्य छड़े पैर छंझ ॥१॥

८. बेरा छल्लार की भार भ कच्छ कच्छ कच्छ हो गया और बहू सती  
 भे भ रही है । वह ऐलकर माय के दरब में छजा क पहाड़ उठते है  
 ये उमने मना नहीं रहे है ( मतो होये का जवनर मुझे नहीं निजा यह जम  
 भ मम जल्लत छजिब होयो है ) ।

९. मे बलिहारी पर बलिहारी हूँ जिनमे भैम बीरों को जम दिया  
 जो जममव को छंझ करे है और मव बासी को सुधारते है ।

१०. मे बलिहारी पर बलिहारी हूँ जिनमे बलिहारी के बलीम बंको  
 को जम दिया जो मवक-मदिव छेर भर जाता छेर बरके में निर दे  
 देते है ।

११. बाळ बजाये क दिन ( पुन जम के दिन ) मे बलिहारी पर  
 बलिहारी हूँ जो मांक-डीठा को बरौद न करने बाळ निहो के मय्य भूमि के  
 बलिहारी को जम देतो है ।

### १४ वीर बालक

१. मुन बलिहारी को जमो ( मय्य ) है—द्वय बाळ को बीर  
 बाळक छेज हुवा जो नहीं मय्य । निह के मय्य वह बीर मय्य परावो  
 को जमना में हो निह के मय्य का बरका पुन जम है ।

धास वज्रतां ह सन्धी ! हीठो नैव पुञ्जाव ।  
 वासां-रै सिर चेतनो भूयां कोप सित्ताय ॥ १॥  
 और मुझ मुख जोइकै परता पांच बिचास ।  
 पर-में मायइ पाठियो बटकै पूजा बाछ ॥२॥  
 'बुझ धारो रण-पोहणू मो-नू कहती माव !  
 प्रायां गाहक पैलिषां कजियो बरजै अय ? ॥३॥  
 मन सोचे जाये मली मोनू बाछक माव !  
 पैर पराया बाइकै, जठै म पर-या जाव ॥४॥  
 बाप गयो छे मावरो अक्यो जात कह ब ।  
 तोव मचाबी कीकरै पैरयां-रै पर बूब ॥५॥

१ हे सन्धी ! बास वज्रने पर वज्रजात बासक ने पैर पुञ्जाकर देवा । बासों की आत्मा सुचते हो सत्वभाग हो जाना और को गर्भ में ही की सिका देता है ?

२ बुझ में पर के दूसरे सब जोगों की मरा सुनकर माता ने बासक को, जो पांच वर्षों के बीच में वा रोक्य और बंद कर दिया । जबने को इस प्रकार रोका गया देखकर वह और बासक रोष के मारे हाथों की काट-काट कर खाये लगा ।

३ हे माँ ! तू कदा करती थी कि मेरा बंध बुझ-भुजि में मोचैवाला है । जब मासों के प्राइकों ( शत्रुओं ) की देखकर तू मुझे कहके छे क्यों रोक रही है ?

४ हे माता ! मुझे बासक जानकर मन में चिन्ता मत्त करना । जिस बुझ में दूसरों के पैरों का बढ़ना बिना जाता है उसमें मचा पर के पैर का बढ़ना क्या नहीं बिना जायगा ?

५ शत्रुओं ने बाता बोक दिया । जिहा माहिरा ( भास ) देख कर और बाता कुनुम्व की बात देने ( देखना की मचीली दूरी करने ) गया हुआ था । तो भी पकेके बासक ने शत्रुओं के पर रोना-पीटना मचा दिया ( शत्रुओं की मार बाता जिससे उनके पर की स्थितों में रोना-पीटना होने लगा ) ।

भोम्य जाणे भूखिया बरकां आठां बाळ ।  
 भेष बरायै सिपणी बंधुर जणै सोह बाळ ॥७॥  
 दिन-दिन भोम्ये हीसतो सदा गरीबी सूख ।  
 धडी कुंजर अटवां जाणवियो ओठूठ ॥८॥  
 पडियो बाढे बाप-रै पाग बसूमळ सेंत ।  
 बेटो पर आयो न्ही धोळी बांण्य हेत ॥९॥

### १४—धोडो

जंग नगारां आजि रय् आवि भगारां भग ।  
 रंग सगंता तांजियो ठो-नूँ रंग तुरंग ॥१॥  
 धीला ! बम्बिहारी बबो, हय दाया यम-नंठ ।  
 पडली पडियो टुक हुय कळ्या पजी-रै रुठ ॥२॥

योद्धे कुछ वह समझकर बोले मैं जा गये कि बाबक भाठ ही  
 रंग का है । पर उनकी वह भावना नहीं था कि इस बराने में सिबनी है जो  
 जो भी कुछ अवती है वही बाब के समान होता ।

य जंग का कड़का प्रतिदिन भोला-भाळा दिखाती पड़ता था ।  
 यमक रंग सदा गरीबी-भरा रहता था । परन्तु कुछ में अब वह हाथियों की  
 कल-काटकर चेंकने लगा हय बापी के केंद्र के कड़के का मौख जाता ।

१. हेता कुसुमी रंग की बगड़ी पहने बाप के बाळ ही कुछ-नूमि  
 में गिरा । वह लफेद बगड़ी बाँधने पर औरकर नहीं जाना ( पिता के  
 मरने पर वेदा लफेद बगड़ी बाँधता है ) ।

### १४ धोडो

१. हे बोले ! कुछ के ग्यारीं का कंध सुनकर शरीर में जोख  
 भरकर रंग सगंता ही ए. कोटव करने लगा । कम्ब है तुम्हें !

२. हे धोडे ! मैं कुछ पर बहिदारी हूँ । यमुओं के मुँह को रेतों की  
 बलों के भारकर स्वामी के कटीर के कड़े रहते स्वामी के पहने ही हुकने  
 हुकने होकर गिरा ।

झीन्सा ! तू पूछू तनै, कीय खुतायल काय ?  
पाखा कंधूम्य पाप्मियो पकठो मोम पुगाव ॥१॥

### १५—नीम

बैर ! खीजै राज-धर पय्यै केव गरीब !  
हेखी ! रूप-धपादिको म्हाँरै नीम तबीब ॥१॥  
हेखी ! ठिख-ठिख कंठ रै जंग विखम्मा राग ।  
तू धम्पिहारी नीबबै बीधो फेर मुहाव ॥२॥

### १६—कायर

मेख छिया-सू भगत नहि होय न गहना हूर ।  
पोथी-सू पंडित नही सस्तर-सू बहि सूर ॥१॥

१ हे नीम बोले ! मे तुझे पूछता हूँ—तू मे इतनी सीझ्या किम  
छिमे को । प्यारे माछो मे तुझे बाका बा, मुझे ( स्वर्ग ) पहुँचाकर फिर  
गिरवा ।

### १५ नीम

१ बैर राजा के घर रहें गरीब लोग उन्हें कहाँ पानें ? इ साथी !  
हमारे को कुछ से कुछ किया हुआ नीम ही बैर है ।

२ हे मछी ! पकि के लरीर में ठिख ठिख ( जंगल ) में ककदार के  
बाव करो । ये नीम पर बज्रिहारी जाली हूँ जिसे मे तुझे फिर मुहाव दिया  
( मेरे मुहाव को बीर दिया ) ।

### १६ कायर

१ भक्त का बैर धरमाने से कोई भक्त नहीं हो जाता पहले वह नये से  
कोई धप्परा ( मुन्हरी ) नहीं हो जानी साथी से कोई पंडित नहीं हो जाता,  
बैर ही इतिहास से छेने से कोई बीर नहीं बन जाता ।

अंकुश समै कु-वस्त्रिणां भागज तजो सभाय ।  
 निगुणा बिर रोपै नही पाव पकी ही पाव ॥२॥  
 कारण सरै न कोय, यख प्राक्रम हिम्मत बिना ।  
 हम्हारणां की होय रंग्या सियस्यं राबिया ॥३॥  
 नर कायर आणै नही खूज सिंहाज छगार ।  
 पोछै दिन जोडै बणी बणी मिछै क्य बार ॥४॥  
 कांक्य समै कु-बेस्त्रिणां मत दे संग महमाय !  
 निबारां आगै निमल-म हार-मोर हो जाय ॥५॥  
 कंस ! न राखो कटक-में नर कायर मिराज—  
 कस्य बज्जनां काढजे कांक्य बीपण कज ॥६॥  
 कंस ! सुहावै क्यू करो, काबर नाबै कज ।  
 रहै न कायर राज-में रहै बिका घर राज ॥७॥

२ काबर साधियों का कुछ के सज्ज में मारने का स्वभाव होता है ।  
 उन्हें से हीन देखे जबकि कुछ में चौबार्ह बड़ी भी पैरों को स्थिर करके नहीं  
 मारते ।

३ बख पराक्रम और हिम्मत के बिना कोई काम नहीं बनता । ऐसे  
 हुए सिंघारों को (बीर का बख बारब किन्हे कुछ कबलों की) प्रोत्साहित करने  
 से क्या होता है ?

४ काबर मनुष्य बमक के सिंहाज की लम्बि भी नहीं मानते । जब  
 छेबार्ह घामने-घामने मिछती है उस घजब के पीछे दिन (दिन बहावै) स्वामी  
 को जोष देते हैं ।

५ हे महामाया (बयबती) ! कुछ के सज्ज काबर साधियों का संग  
 मत देना । हे धोखों के देखते देखते कज भर में घटरा हो जाते हैं ।

६ हे पति ! अपनी छेवा में कज्जा-हीन काबर पुस्त्रों को मत रखना  
 कुछ को बीछना हो वो उन्हें काले बैलों पर चढ़ाकर बिकस देना ।

७ हे पति ! तुम्हें अच्छा कथ बेसा करो, पर काबर कभी काम नहीं  
 जायेंगे । जिसके राज्य में काबर नहीं रहते, उन्हीं के घर राज्य रहता है ।

समर सिवाङ्ग-मुमाङ्ग गम्भीरां-रा गृह्य किरे ।  
 अहवा ठो अमराङ्ग रोट्यां मूषा, राजिया ! ॥८॥  
 माया सै है ठाकरां ! कबज कठै कुण केव ।  
 अयर पर माया दियै सुर दियै रण-अंत ॥९॥  
 मरै सरण, पण ठाकरां ! मरयै मर बहोत ।  
 सुरा रण-अंत मरै मांयै अयर-मोत ॥१०॥  
 स्यामर बारै सींग-रो, भाग्य तस्या समाङ्ग ।  
 सींग-विहृजा सीपका पालै मैगङ्ग पाङ्ग ॥११॥  
 अयर मूठो बीबणो अण्यै मन करणो ।  
 सुरां साचो बीबणो अे जायै मरणो ॥१२॥

कायर-निंदा

कायर-करै मांस-कू गिराङ्ग कब न खाहि ।  
 कहा कु-पापुन मुल करै हम भी दुर्गति जाहि ॥१३॥

८. जो कुछ मैं गीदव क-या स्वभाव रखते हैं, वर गाछियों में घोर  
 दुष्मे फिरते हैं जैसे अरुण है रजिया !, रोमियों के बड़े भी मईचे हैं ।

९ है अकुर साहब ! फिर छोटी देखे हैं (मरते छोटी हैं) वर कोई  
 कहीं घोर कोई कभी । कायर वर में फिर देत हैं घोर गुरबीर कुछभूमि में  
 बैठे हैं ।

१० है अकुर साहब ! सभी मरते हैं परन्तु मरके-मरते में बहुत  
 अंतर है, गुरबीर कुछ-भूमि में मरते हैं घोर कायर की मौत तब वर होती है ।

११ सांभर (बारहसिया) बारह छींगों वाला होता है ता नी उल्टा  
 स्वभाव धावने का होता है । ऊपर सिंह बिना छोटी का होता है फिर भी  
 हाथियों को घायल करता है ।

१२ कायर का जोना भूख है वा केवल करना चमत्ता है (राजदिव  
 डारवा रहता है) । कल्या जीवन बीरो का है जो मरना जानते हैं ।

१३. कायर क मीन को गीव भी नहीं खाते । वे सोचते हैं—किन्  
 हिन्ने मु ह को जवदिव करें लाकर हम भी दुर्गति को प्राप्त होने ।

बोई पातर, बिरह गत स्याम ज रूपा म्याह ।  
 बिख नर केरो मांसदो कूकर-काग न खाह ॥१४॥  
 मोई पातर बिरह गत, स्याम ज रूपा म्याह ।  
 कदा तास करेकरो प्रीम्य मांस न खाह ॥१५॥

### कायर-फटकार

मांम्य ! की कर मागियो अंत न प्युई अँस ।  
 बीची बीठा कुल-बहु मीचा करसी नैज ॥१६॥

### माता-री फटकार

पूत ! पयो तुल माबिया बप-जोबुस बस पाय ।  
 ओम न जायी आबसी जामय-वृष लजाय ॥१७॥

१४ जिसके बोई पर पातर और शरीर पर बिरह-बल्लर होने पर भी  
 किसी कबुछो से बिर जाता है उस मनुष्य के मांस को कुछ और कौन भी  
 न खाते ।

१५ जिसके बोई पर पातर और शरीर पर कलम होने पर भी  
 किसी कबुछो से बिर जाता है उसके कदवे जलियाल के मांस को मीचनी  
 नहीं जाती ।

१६ हे बोई ! जिस तर से जाने हो ? क्या मौल घर पर नहीं  
 जायगी ? तुम्हारी कुलीन बच्चे को, दूसरी लिवों को देखते घर आँखें भीची  
 करनी पड़ेगी ।

१७ हे पुत्र ! मैंने शरीर का वास करके बाबा दूध पिलाया था  
 और तुम्हें पखा था । वह नहीं जाना था कि माता के दूध को खजाकर  
 जाम खाओगे ।

## पत्नी-री फटकार

कंठ ! परे किम आबिया तेगां-री धन ब्रास ।  
 छहगै मूम्ह लुझीबियै बैरी-रो न बिसास ॥१८॥  
 सग तो अरियां लोस थी पिब ! पर आया माब ।  
 किम लंटी सग टांगठा बण पर टांगो छान ॥१९॥  
 ओ गैजो ओ बेस अब कीनै धारण कंठ !  
 हुं जोगण किम काम-री, बूझा-खरण मिटव ॥२०॥  
 धन ! नीबे मव लोपियो मो मम मरियो आज ।  
 मोनू ओझै कंचुनै हाथ दिखातां छान ॥२१॥

१८. हे पति ! छववारों के दर से उतरकर घर बैठे खोद जाते !  
 कसरो से मेरे कहेंगे मैं बिप जाहने । बैरी का कोई करोछा नहीं ( व-अने  
 यहाँ भी जा चुकने ) ।

१९. हे पति ! घर जान जाये । छववार को कंचुकी के झीन किया ।  
 किम लुंटी पर छववार को होमठे से धन उठ पर आज को उठारण  
 होग हो ।

२०. हे पति ! मेरा वह पहना चीर वह बेस धन आप वहन  
 कीजिये । मैं तो जीमिण बन चली धन आपके किम काम की ? वह पूजियों  
 का कार्य भी मिला ।

२१. हे पति ! जीमिण रहकर बकम कियाइ दिया । मेरा मन आज  
 मर गया । मुझे जोड़े हाथों की कंचुकी में आपने हाथ दिखाये हुये ( जोड़े  
 हाथों की कंचुकी पहनते हुआ ) कहा जाती है ( सचवा क बैस पहनते हुये  
 खजित होती हुं ) ।

दि०—सचवा जोड़ी बाँहों की कंचुकी पहनती है भीर भिचवा धँकी  
 बाँहों की कंचुकी ।

मझा ऊँचा माछिया ऊँचा गोम्व अधाग ।  
 एन नीचा बाहर पिऊ ऊँची करी न स्वाग ॥ ॥  
 'बू! पत छोवी समर में बिय पत आ गत होय ।  
 पत त्यापा आ तरपरां छाह न बैठै कोय ॥२३॥  
 ममिहारी ! पा री परी अर न हथेली आव ।  
 पीष मुवां पर आबिया बिधिया रुखन बयाप ? ॥ ४॥

काह

मोनारी नूरै कहै रे गहर कुम्ह-मोय ।  
 मून् पहाई-मोयसा ! मून् मझाई होय ॥२५॥

२१ मेरे मझा में ऊँची-ऊँची अदारीवाँ हँ और बहुत ऊँचे-ऊँचे  
 प्यास है पर पति का आनर नोचा है क्योंकि उसने बुद्ध में छलना ऊँची  
 नहीं की ( नहीं उठावी ) ।

२३ हे पति ! मुझसे बुद्ध में पत ( पतिहारा ) को दी । बिधा पत के  
 पत दया होजो है—जिन देवी के पत ( पती ) को को बिधा उनकी क्षत्ता  
 में काह भी नहीं बैठता ।

टि०—पत शब्द में रखे है ।

२५ हे ममिहारी ! नहीं का अन्न हल घर में न आया । मेरा  
 पति मरा हुआ घर आया है मैं को बिधवा हो चुकी हूँ, नगर बिधवा के  
 बिधे क्या गजार ? ( मैं जब जिवित नहीं रह सकूँगी ) ।

दि —बुद्ध में नाम का अल्ला मर जाने के समान है ।

२७ सुनामिब बोली है और कहती है—जरे बुद्ध ( की पतिहारा ) का  
 पायेबाह बाहर ! ऐसे मेरी मजहरी भी दो । जरे मेरी अमाई कोयेबाह !  
 ठरा मजह हो । ( मजह = पत्नी )

भुरे इस रंगरेखणो, कृपा ठाकर ! राख ।  
 बसम सती धण रंगती, दीनी आस पुढाय ॥ ६॥  
 गणपण कृष्ण, र गजब भूडा आगम मीय ।  
 बसम कडायो अतर पण मूढो सेखी कोण ? ॥ ७॥

### काशर पर ध्वज

सुरा जाठ। सुराय वृथां आव झार ।  
 हूँ बहिष्कारी अपरा सदा-मुहाणय मार ॥१८॥  
 मूढ नयक, सिर-रो मुगठ सस्तर सांस समझ ।  
 मावठ खावो समर-सू कै मह लायो नाह ? ॥ १९॥  
 काव दियै धण ! येहू हूँ मज-हुँत बिसस ।  
 मैं तो विष सब हाँसिया उण मज केक महेस ॥२०॥

१८ रंगरेखण इस प्रकार रोती है—घरे बिछम्मे कानून ! वह क्या किया ? मैं तो सोच रही थी कि छती के बसम रंगूनी पर तु मे वह जाठा ही मिरा ही ।

१९ गाविय रोती है—घरे बिछम्मे ! घर कौटुम्ब तुने नजब कर दिया । ऐसी बली मे छती होवे के बिन्ने मर्हणा हज ककवाला ना । उस महणे इस को जव हजरत कोम खरीदेना ?

२० बीरा का बीरत्व डूरा, जो वृथियों की कोना को उठार देता है ( जो बिचका बना देता है ) । मैं कानूनी घर बहिष्कारी हूँ जिसकी निन्ना सदा मुहासिली रहती है ।

२१ हे पति ! तुम कुछ स भाग्यकर मौज को वाक को सिर क मुकुट को हवियार को घीर माखिक को भी प्रापित हो जाये । मरार क्या नहीं जाय ?

२२ हे मित्र ! क्या ताता देती है ? मैं बीर क कहीं नदकर हूँ । मैंने उसे बिना मजको ईसा दिया । उस बीर ने तो केवल महामंद्य को ही ईसाया ।

अधिक सूर ठै हूं अधिक, बनिता । समझ बिबरु ।  
 अग मारो मो-नू हंमै ह्य-नू नारद अके ॥२१॥  
 बस । मुण पाठ भरम-सू साबन क्षया सीस ।  
 माल अवार मंगावसु पाषा बीस-पचीस ॥३॥  
 पाष बजावां पूछ पिब । कसा मा । मंगाव ।  
 ईवत दिव बिब आ वसो पूछ हसा पाव ॥३३॥ ६७

### १७—बारवा

मात-पिता सै बीमरै वंदू बीसारै ।  
 सूरं पूर्ण बातकी बारण बीसारै ॥१॥

११ हे बनिता ! मैं क्या हू वा बीर क्या—इस बात को अच्छी तरह समझकर देख । आज सुने देखकर माता जगत ईश रहा है जब कि हम बीर को इकट्ठा करके अकेल बारव ही ईकते हैं ।

दि०—कहा जाता है कि बीर को बीर-पति पाते इन्कर महर्षि और बारव प्रसन्न होते हैं और निरुन्धितान्कर रहते हैं ।

१२ हे त्रिभू ! तुम ऐसे चर्म के बख पर सिर को लाकित क जाया जाता हू । पगली चढ़ी पची लो जाये है जनी बीम-पचीम बगदिया माक मंगवा जूगा ।

१३ हे बति ! बजाव के पूछकर बगदी को लो माक मना काम पर गयो हुई प्रतिष्ठा को किन्तु प्रकट बीमप्रयोग ? मैं तुकार-तुकार कर पूछती हू ।

### १७—बारव

१ माता-पिता भूक मारते हैं । माई-बन्धु भी लुका देन ह । पर पर हू बीरों की क्या को बारव बार रहक ह ।

रण हाकीने चारणा ! चाहे भव लग चेत ।  
 करी मुहक जिसकी कहा विष सो दूर कथै न ॥ ॥  
 आपा पक्षी ओझण जागइ । जीमण जाग ।  
 रण मझठा भइ दूर को सुणसी सीधू रण ॥१॥  
 भाट । घणा दिन मानता बुझ भूला भू-कंत ।  
 रहिषां नहै पीर-ही जाणा विरह जपत ॥४॥  
 जे रिण स बिदहायता अ मझठा स्वग-भूत ।  
 जे चारण रिण जिस गया ? क्रियविंस गइ रजपूत ॥५॥  
 भारत इला दे रह्यो थाया बीह बहूत ।  
 फेर जगायो चारणां । ऊषाया रजपूत ॥६॥  
 नर सुख गाफिल सीह जाणू कह्यो जगामो ।  
 वझ चंपरी बीह जोग हुय मझेइमो ॥७॥

१ हे चारणा ! जब कुछ में चलो जब तक चाराम हैकत रहे । बीर जैमी करनी के समका बैसा ही बर्चन करो । वह बात दूर रहने से नहीं बन सकती ।

२ हे होखियों ! भाइनेपसों पर और रंजनहकों के पास गीत गाये में सदा जागे रहते हो । जब जागे नहीं नहीं बरते ? कुछ स गिरता हुआ कीम बीर दूर स मुम्हारे भिन्न राना को सुनेता ?

३ हे भारी ! बहुत दिनों से कह रहे थे कि तुम्ही के स्वामी (राजा) चरण कुछ (की जाह) को भूख गया है । जब कुछ में बीरों के बिस्तर रहलो नहीं इस समयमें कि तुम वास्तव में बिदह बखान करैवाले हो ।

४ ओ कुछभूमि स चिराते थे (प्रोत्साहन करते थे) के चारण क्रियर गये ? चार बिबर गव के चित्रि जी लखवारी से कट-कट गिरते थे ?

५ भारत दुकार रहा है, बहुत दिन हो गये, बीर चित्रि को बने हे उम्ह फिर स जगामो ।

अमुप्य सुख को बीह में गादिल को जाता है ता उसके बिभ जागना बड़ा कहवा होता है (जायवा बुरा समता है) पर चंपरी की देखा हावे पर (बिबाद का देखा या जाने पर) घर को ब्येकबर जगामा कथित होता है ।

लज-बट मांह लोट देखे दुख पायै दुसह ।  
 चारु चुमती चोट हिरदै सबदां-री हयौ ॥८॥ ३०३

## १८ पराधीन भारत

धोखे पड़्यो घाप, पिछ हिमाळै पीषळै ।  
 आसु मरै धाप, भारत दुखियो भानिया ॥१॥  
 बना विरंगा भाव पसु-पंखी पिता पही ।  
 आसु प्यरां धाप भारत दुखियो भानिया ॥२॥  
 ममठै छाप मरै कबहु बखतै काम्यै ।  
 भरती लूह मरै भारत दुखिया भानिया ॥३॥  
 टीका कर संताप, पग-पग कया पाछै ।  
 धूब बहावै धाप, भारत दुखियो भानिया ॥४॥

० जब जर्मियन-वां में बुराई बखतर दुसह दुख पत्ता है तब भारत उनके हथों में कबलों की चुमती चोट मारता है ।

१. हे भानिया ! भारत दुखी है कछका शरीर लूब पीछा पड़ गया है । वह हिमाचल की बर्फ के कप में पिघलकर बह रहा है, और आसु गिरा रहा है ।

२. बनी का कप विरंगा ( विच्छेद ) हो गया है । पसु-पंखी भी पिछा में पड़े हैं । प्यरों के भी आसु निकल रहे हैं । हे भानिया ! भारत दुखी है ।

३. हे भानिया ! भारत दुखी है । भारत की भूमि पर लूने उड़ रही हैं । लूनों के कप में बह रह-रहकर कछते कछते में छाप भरता है और धमक बहता है ।

४. कछते लूने टीके पग पग पर कया-बखर करते हैं ( टीकों के आकार बरबकते रहते हैं ) । वे लूब लूब उड़ाते हैं । हे भानिया ! भारत दुखी है ।

मदियां सोक निरुद्विग्न करीं स्निग्ध रोदन करै ।  
 पायस मूँछै पाट, भारत दुखियो मानिया ॥३॥  
 भारत दुख भारी मरणांसु आसु मरै ।  
 धुन अचानक धारौ, भारत दुखियो मानिया ॥४॥

### १६ वीरपत्नी—रो ओलुभो

मलबाम्ब हो पौडम्बा सुध-सुध हीन्ही भूख ।  
 पर-हाथो—रा हो गया यो दिवहा—में सुख ॥१॥  
 दुसमण देखा छूटकर, छे जाय परदेस ।  
 एजन । बुद्धिमाँ पैर छो धरो जन्मभो भेस ॥२॥  
 तन पर छाकी ओढकर महलाँ बैठिया जाय ।  
 अम्बायो दिन-दिन अठै जोर जमाता जाय ॥३॥

२ वर्षों बाद में वहीं पाद तोड़कर बहती है के किमारी एक करकर बमक रही हैं मायो निरुद्विग्न ओक छे रुदन करती है । है भाबिया ! भारत दुखी है ।

३ भारत को बड़ा भारी दुख है । करवों के रूप में चोखु धर रहे हैं । उससे आज अटक पुन चारण कर रही है ( चिन्हा में हुआ है ) । है भाबिया ! भारत दुखी है ।

४ मलबाम्ब होकर ( मल में पालिष होकर ) सो मने आरो सुध-सुध मुखा हो और पराधीन हो मने । इन्ध में वह बड़ा दुख है ।

५ दुरमन बंध को छूट कर विदेश छे जा रहे हैं । है राम्ब ! वृद्धिमाँ पदन छो और जवाना भेस चारण कर यो ।

६ मुम तो शरीर पर साड़ी जाँडकर महलों के भीतर जा बैठे । वहाँ अम्बायो दिन-दिन प्रभुता बढात जा रहे हैं ।

रूप ब्रह्मको माय-रो, झीन्डो देस गुलाम ।  
 कै सखाम सुद मेजवा कर दिया सुद सखाम ॥४॥  
 र्भा गयी का धीरता का रजपूती खान ।  
 दुष्टा-प मोनात हा ला बैलछ भूमिमान ॥५॥  
 रजपूती सठ को दियो, सठ-हीण सरदार ।  
 पठ-हीणा रजपूत हो मठ-हीणा-भरदार ॥६॥  
 पठबीन मारत हुयो प्याछा-री मनवार ।  
 मात्र-मूम परतंत्र हो बारबार भिरभार ॥७॥  
 दीवर, बड़ा बटेर भर मुस्ता सूर सिकार ।  
 दृष्टां रजपूती नहीं नाम सिध रजपार ॥ ८ ॥  
 बिस कावो कै सरय को सरवरिया-री याह ।  
 कै फठां बिच भास को पापरिया-री याह ॥९॥

४ मल्ला के दूध को खवा दिया दूध को गुलाम बना दिया ।  
 स्वर्ण दूधरों की सखामी कैते थे या धन दूधरों की बखानी  
 थी ।

५ वह पद्मदेवाजी धीरता क्यों पयी ? वह रजपूती ठान  
 की ? रोमियों के हुकूमों के निजाली होकर समिमान को छोकर  
 हो ।

६ रजपूती ने जल को भी दिया । सरदार सख से हीन हो गये ।  
 भी । तुम प्रतिष्ठा से हीन और बुद्धि से हीन राजपूत हो ।

७ प्याछों की मनुहार में ( तुम्हारे करतब पीछे नीर फिजाते )  
 । पराधीन हो गया । मनुजूमि पराधीन हो जल हलके लवकर खवा  
 जात गया । बार-बार विचार है तुम्हें ।

८ दीवर बना, बड़े रजा कारमोश और लूचर का सिकार करके  
 हीन हो गये । तुम 'सिद्ध' नाम को बरत करकेवाले हो । सिद्ध नाम  
 देवों के छिन्न हथ पड़ा-बकिनों के सिकार में कोई धीरता क्यों ।

९ या को पहर काकी या सरदेवर की गहराई की शरब को ( दूध  
 रो ) का मजे में खँदवा पहन को ।

वीरपणो भारण करो, या कायरता छोड़ ।  
 पैरो छोड़ो मान लै नूबो खेबै मोड़ ॥१०॥  
 मल्ल जसुमल पैर सो, कसो कमर सरदार ।  
 बरखी भीर कटार ले हुबो सुरंग असवार ॥११॥  
 पाछा फिर मत ग्यह ज्यो पग मत हीज्यो टार ।  
 कट भल जाम्यो खेत-म पर मत जाज्यो हार ॥१२॥  
 सीय राज-री होय तो हूं मी जखू साथ ।  
 दुखमण भी फिर देख लै म्हा-रा हो-बो हाथ ॥१३॥  
 पो सुभाग खारो खगै जब कायर भरवार ।  
 रंभापो जागै मखो, होय सूर-सरदार ॥१४॥

## २० उद्बोधन

बाजी सी बंगाळ महापद्म पधिया मरह ।  
 पग पकिया पंचाय, दूधक रह्या दसोतवा ॥१॥

१. इस कायरता को छोड़कर वीरता को प्राप्त करो, जिससे  
 शत्रु तुम्हारा छोटा मान लें और मुँह मोड़ लें ( पीठ दिखाकर चले जाएँ ) ।

११. तुम्हारी बल्य पहन को कमर में ठाकर बाँध लो, और  
 बरखी भीर कटार लेकर जाइ पर सवार हो जाओ ।

१२. पीछे मुड़कर मत देखना पैरों को मत दिखाया रख-वेज में  
 कट भले ही जाना पर हाकर मत घाना ।

१३. आपको अनुमति हो तो मैं भी साथ में चलू जिससे दुखमण  
 हमारे भी हो-बो हाथ ( खड्ग ) देख लें ।

१४. यह सुभाग द्वारा खगाया है जब पति कायर होज है । और  
 जब वह गुरभीर और सखा सरदार होता है तो वैजय भी जप्या समता है ।

१. बंगाळ ४ घाये बहकर बाजो की मई मरडे भी बड़े पंचाय  
 ३ भी पैर घाग बढावे पर देख क खोग ( राजस्थान क निचामी ) दुबके  
 ४४ है ।

पर गुजर-री पाक डगमग पड़ भासण दुल्लै ।

०। रजपूत अबाक ताक रखा मयितक्य-नै ॥ ॥

कामर-सू बम्बान सकिया नर ससार-रा ।

पर पर परमायु अवपतियां । जागी व्यै ॥३॥

ठिरिवा-री तरवार पीरां जाम्ही बीजम्ही ।

निहर जटै-री नार, पीरस किम छाडै पुरस ? ॥४॥

रजपूत ज्यति

पर निप पासक धूजतो सासक रही निसक ।

बही जात दासक मयी अहो विपाता-बन्ध ॥५॥

जग रजपाय्य से रखा पिडपाय्य घर-बीद ।

अर्था-म जदिया तिसे जीपाय्य बस नीद ॥६॥

परतां पर घर धूजतो दादमता दिगपाय्य ।

अथ-बी राजपूतायिया जपती ग्यम बंवाय्य ॥७॥

१ गुजरात भूमि की जात से बड़े-बड़े सिंहासन भी डगमग कोकट है । पर हाज ! राजपूत (राजकुमारों) जू ब जायें सुरक्षा भावी को देख रहे हैं ।

२. इस भूमि के बालक से भी संसार से बड़े-बड़े बलवान पार नहीं प सकेंगे । हे भूमि-बिम्बो ! इस भूमि को देखकर ही भय जामो ।

३ इस भूमि की बारी की लवार को बड़े-बड़े बीरों के प्रथमुख निज्जही कमजोर । जहाँ की कारियां निहर हों वहाँ के दुश्म दुश्मार्थ को मका डेके कोर देंगे ।

४ जिक्रगी पाक से पूछी कंवरकी भी जो निज्जक पूछी का तासल करती भी बही जाति पाक दण्ड बही हुई है । निबिन्न हैं विवाता के सेक !

५ जो जगत के रजक बने हुये थे, जो कटस्थी से का पूछी क स्वाभी से जात से ही ताकों के भीतर बंद हुए बीद के कट रहे तो रहे हैं ।

६ त्रिके पैर रकने से पूछी कंवर जाती भी जो दिगपायी को भी धककारते से चक्राविवर्त जपके स्थलों के दूध से ( स्थलों का दूध पिनाकर ) प्रचंड अग्नि को ( अग्नि-कण बीरों को ) ज्जम देती भी ।

राग-भारां सामै लखी, हर न पही आतंक ।  
 बिका पहावर जातही पही बखरै पंक ॥१०॥  
 जमियां निरभै बख सज्जन बमियां बख बर्गय ।  
 बिज बख उज्जल हिंद, हा ! पा रजपूती जय ॥११॥  
 ठाकर रहिया नाम-रा, ठा कर ली सै ठम ।  
 ठाकर होठा बस-मे बस न हतो गुलाम ॥१२॥  
 ठाकर गेया ठग रखा, रखा मुझ-रा चोर ।  
 पै ठाकरास्यां भर गयी, ठाकर जपती चोर ॥१३॥  
 वेसा भारत वेस सत-मारग भूमै सफल ।  
 रजमट लागै रैस रजपूता ! किण दिस पछा ॥१४॥  
 कुज रहिया रहमी किता जीवां जिता जतन ?  
 रजपूता ! ऊंचे रखा, उम्मी पया रतन ॥१५॥

५ ठाकराओं की भावों के सामने पड़ी रहने पर भी जिसका इतना  
 भावुकता नहीं हुआ, वही भीर जाति आज कीचड़ में पड़ी क्यों रही है ।

६ जिसके जम जाने पर मित्रों के दूख निर्भव हो जाते थे जिसके  
 इतर जाने से शत्रु क्योंते थे और जिसके बख पर भारत उज्जल था हाव !  
 वही राजपूती आज आ रही है ।

७ हमने सब जगह क्या कहा जिया ! जब बाकुर नाम क ही  
 बाकुर रह गये हैं । यदि देश में सच्चे बाकुर होते तो देश गुलाम नहीं होता ।

८ बाकुर चले यन्त्रे अब तो डग रह गये हैं भीर रह गये हैं  
 मुझ भर क चोर । ये ठाकराजियां भर गयीं जो दूसरे प्रकार के बाकुरों को  
 जम देती थी ।

९ दको, जारा भारद्वर्ष माव क मर्म को पकड़ रहा है । राज  
 पूती को कर्कश सम रहा है । हे राजपूतों ! किस चोर आ रहे हो ?

१० कीचड़ रहे हैं ? किने रहे हैं ? मावो का क्या मन करना ?  
 हे राजपूतों तुम सो गये हो, बहुत रज मज हो जायेंगे ।

## एजपूत एक्स

मन भीठा, मीठा बयल फीठा ईस बिन पाव ।  
 भीठा, बुरगुल नू डता बीठा अउ वसोव ॥१४॥  
 पण पापर दिस पातल्ल रज-बट-हीजा रंज ।  
 पण कर्कशा घेरिया, कम्पट, वंस-कम्प ॥१५॥  
 भासा-भसा मांड-सा रहे किरंटा-कम् ।  
 भजिया बे-जूमरिया भजिया भूका भूप ॥१६॥  
 रचता आइव रुकवां नचता हव मारुं ।  
 अच मोटर कडता फिरै मूँड मुँडल्ल मंड ॥१७॥  
 पीपता जूमर से मूठी मूठां मांय ।  
 पतख्सा-री पाकटा मूठी भर मुळकय ॥१८॥

१४ जो सब से बेहतर रहने वाला पड़ते हैं जो मन के कई चीखने के मादके, निरंकुश होकर ईसबेबाके प्रतिष्ठ-रहित हीन और दुगुलों को पीसबेबाके हैं ।

१५ जो दुश्मन के पत्थर दिक के पतल राजपूती से रहित और रहित घरेलू कर्कशों से भरे हुये कडककारी और देश के कर्कश हैं ।

१६ जो बोली और देश में जाँच बैठे हैं, जो किरंटों का कम बनावे रहते हैं जो कुछ में नहीं मूँडते जो बड़े-छिछे होने पर भी निरंकुश हैं ।

१७ जो कडकारी से कुछ रचते हैं, जो बापों को बचाते हैं के ही सब मूँडें मुँडते मोहरों में डकते फिरते हैं ।

१८. कुछ में जूमबेबाके जो घरदार कडकार की मूँडों की सुद्विषों में रचकर कोमिल होते हैं जो सब के ही पतख्सी की जेबों में सुद्विषों रचकर प्रसन्न होते हैं ।

पीरा-रस-पी बिचरुनै गधुनै जीवु सखइ ।  
 सापव ऊठै तोड़-सा कबि दीठा बखइइ ॥१८॥

### देखी राजा

हुक सै मछे देह प्रण पृत सम पावता ।  
 मूठ प्रपंच सबह, छूटीनै घर ही छरता ॥ १॥  
 जीवण अहमे जाय सैख सिद्धर सिताम-मै ।  
 मांटी मीज पडाव परणा यिछलै पेट-नै ॥२॥  
 कै जंगल रणवास कै कै कबतां भाडास ।  
 जाय जमारो राज-रो नालै प्रजा निहास ॥३॥  
 हो ग पराया हेत राजां ! यो घर राज-रो ।  
 राज खगा क्यू खेत नाक-रूप बनिषा रखा ॥४॥

१४ बीर रस से वे चौकते हैं उनका जीव उचर जाता है ।  
 कलहकारी के चारण को देखते ही तुरन्त भयक उठते हैं ।

१ सारे हुन्तों को अपने शरीर पर देखकर जिस प्रजा को पुत्र के  
 समान पालते थे आज वैको वही प्रजा सूटे प्रपंचा द्वारा घर ही में  
 छूटी आ रही है ।

२१ आपका जीवन खैरें, शिकारों और सखाम्नी में व्यर्थ बह होता  
 है । अरवाचारी मीज उड़ाते हैं और प्रजा पेट को रोती है ।

२२ आपका जीवन या तो ( शिकार करते हुये ) जंगलों में या  
 रजिबाम में या ( बाजुबानों में उड़ते हुये ) आकाश में बीता है और उचर  
 प्रजा निहास भरती है ।

२३ हे राजाओं ! आप पाले नहीं वह घर भी आपका ही है ।  
 जिस खेत के जिसे आप नाक क समान ( रसक ) बने रहते थे, अब उसी  
 खेत को वही आपके खेत है !

निरम हित निर-भेद, ज नर बाहे राज-रो ।  
 वस चुगला हज वरद देन माह पटको जिह्वा ॥२४॥  
 कि । धनूनां फांस साव प्रजा-रो सीषियो ।  
 सो बुधबायो सांस, व्याख्य-मुल ज्यू बाप्ययो ॥२५॥  
 पग-मा धरना पीठ नीठ आज जग यू निभी ।  
 पण अब परजा-पीठ मुली भीट संकर जिता ॥२६॥  
 महिप हाजिया मन-मठै परजा जितै अजाण ।  
 पनर वरसां पूतडा वरसै मित्र प्रमाण ॥ ७॥  
 समै फट्टतां जेज नह, प्रजा नठै मु भयमय ।  
 पर भूषण की वस बसै, फल-म भइक डहाय ॥२७॥  
 इस थीम जरमम दुरक भाव हुता फलसाह ।  
 बे सिंघासण फिट गया सोचीनै नर-नाह ॥२८॥

२४ जो व्यक्ति निर्भय होकर पापका दण्ड हित चाहते हैं  
 उनको इस समय चुगलजोरी के बराबर दोनों में बाँट रहे हो ।

२५ विनकार है तुम्हें ! कामों के बदल करिबर तुमसे प्रजा के  
 घर को जो दिया है ( उधे जबकी बात नहीं कहते ऐसे ) । भीतर-ही-भीतर  
 चुगलकर दके हुंसे उस मर्द को जवाबामुफ़ी की भाँति समझ लेना ।

२६ वस-वस पर झोकाओं से पीटते हो । आज तक तो कहिबाहू से  
 तुम्हारी बात बिज नहीं है । पर अब प्रजा की बात चुक गयी है मानो  
 महादण्ड का सीधरा बैल सुना हो !

२७ राजा-न अब तक समझ नहीं पकड़ी की तब तक राजाघों के  
 स्वेच्छाचार कर दिया । पर तुम के वज्रद बरें का हो जाने पर समझ मात्र  
 मि. कन्मा व्यवहार करना उचित है ।

२८ अब प्रजा मुझका डरती है जो तुम का चाहते हैं नही  
 जगती । मुझ पर क्या बल बल सकता है बल भर में बहु-बहु महक  
 गिर बबल है ।

२९ कम थीन अर्चना चीर तुकी चारि में बाइसाह से । उमक  
 व राजमिदमन कहो नव । हे राजाओं ! धोखे आ ।

राज्य करता इस बार बंदूकें जार-सू ।  
 परण्य कदिये फूस मछी न धँत गत भानिया ॥१२८॥  
 परया ही पम्पटाबिया अणचीत्या विणस्त्रोज ।  
 काक भिका धर गंजता, धाज मिस्री नह खोज ॥१२९॥  
 हिंसा भारणहार हिंसा-सू बोधत दुर्ध ।  
 नम साईसा जार भटके कम्मा भानिया । ॥१३०॥  
 क्रिय रच्यत-रै कोर मरुत । सिरभै माछण ।  
 तिय-रो बबुई तोर, सिरवात । बीजो समम् ॥१३१॥  
 क्रिय रच्यत-रै कोर पैतोका करठा विद्या ।  
 काछविद्या-री कोर क्रिय रग-में हाथी करी । ॥१३२॥

१ इस में जार बंदूकों के बख से राज्य करते थे पर मजा के  
 उमरों फूस की मारि बढ़ा दिया । हे भानिया ! सीमा के बन्दर मजा जमा  
 ( सीमा के बाहर मरणाचार करना ) मजा नहीं होता ।

११ मजा के ही उमरों मिला सीमा के जमानक ही पकड़ दिया ।  
 कल को घारी फूँधी को वास्तविक करते थे आज उनके मिथ्या ही खोले  
 नहीं मिलते ।

१२ हिंसा भारनै बाधे हिंसा से ही छुल हो जाते हैं । हे भानिया !  
 जगत में जार जैसे लाइलाह जोक ही धावाप में उड़ गये ।

१३ हे बीरों ! जिस मजा के बख पर तुम निर्भय होकर खिरे  
 के उसी का घोर आज बख रहा है । हे सरदारों ! समम् लेना ।

१४ जिस मजा के बख पर बखटे-बखटे ही ( बहाने ही ) विपति  
 जपना लेते थे वो कदियों की कोर भी उमरों बरनै ही हाथों तुमके क्रिय  
 रग में कर दिया ।

मित्र बाक-रै जोस दिहनी-सू करता हमस ।  
 खस अपार रोस अपपतिबां ! अब आप-रै ॥३५॥  
 बाबूदा मानाप राज सदा निज रैत-रा ।  
 धरिण-सू नी पाप, सिरदारों ! बीजो समझ ॥३६॥  
 घेस्ट हंग धिरैगास, रण्यत-सू रैखो बाबूदा ।  
 होतो मिस्-री हस, सिरदारों ! बीजो समझ ॥३७॥  
 आप बिजो नू चोड बचम मुख चंगरेज-रो ।  
 भोगख गछा अमेठ, सिरदारों ! बीजो समझ ॥३८॥  
 इकमना चंगरेज, मदि-मंडळ राजै मरद ।  
 हे हसहो मिस् हेंक सिरदारों ! बीजो समझ ॥३९॥  
 बिगता नू राज-काख बचम देर बांरा बका ।  
 ही बाबै दिहबाय, सिरदारों ! बीजो समझ ॥४०॥

३५ मित्र भाइयों के बच पर दिखी (बी बादशाही) से निज जले  
 ३६ राजाओं ! इन भाइयों के (उस प्रजा के) घर-घर से भाव तुम्हारे  
 मनि रोख पाया हुआ है ।

३७ आज घर घर की प्रजा के माईत (मई-बाप) कहनाले ये ।  
 वही भाव आज के संज सा गयी है । हे सरदारी ! समझ लेना ।

३८ प्रजा के दूर रहने का धर्मजी रंग तुमसे जबल अपना रखा  
 है । इनसे मित्र की दानि होनी ? हे सरदारों ! समझ लेना ।

३९ आज के जम जो का बचम मुख को चोख भी वही जगनाला  
 परन्तु जगनाल बहुत से जगनालिये । हे सरदारी ! समझ लेना ।

४० धर्म का जगम में चोख-जग होकर तुम्हीं-मंडळ पर पीरी के रूप  
 में स्थापित होते हैं । प्रजा प्रज और दिन में बाबा जाला है ।

४१ हाथियों के जगम जगम जगके वड़े बचम देकर कभी पीछे  
 नहीं हटते थे । वही प्रजा दिगुरबाव उनके हंस में था । हे सरदारों !  
 समझ लेना ।

बीनां ऊपर हाथ आप डरता आप-सू ।  
 सुखी न कुराणा आप सिरबारा ! छीनो समझ ॥४१॥  
 म्यां गायां हित जाय यय कृता धारा बडा ।  
 मोसो फटक मांय सिरबारा ! छीनो समझ ॥४०॥  
 सदा रक्षा रणबान सव-हिम्मत-में सुरमा ।  
 हंसै सकल हितबास सिरबारा ! छीनो समझ ॥४२॥  
 अत स्याय-में आप बीबरगा कुम्ह-वहूरी ।  
 अत रसा-तल माय सिरबारा ! छीनो समझ ॥४३॥ ३५०

## २१ स्वतंत्रता-युद्ध

नवीन क्षत्रिय

देस हेत बलिदान भारत कृत्री मूढग्या ।  
 सौ घटम्यो सनमान माय गमायो मानिया ॥१॥

७१ आप आदि-काक से परीनों पर द्वा रकते आते थे । परीनों के कन्दुत-भरे पवन आपसे कमी नहीं हुए ( आपके हास्य में परीनों को रोने का कोई अवसर ही नहीं मिला था ) । हे सरबारा ! समझ लेना ।

७२ जिस गाथों की रक्षा के लिए आपके बढ़ी आये दक कद कद मरते थे उन्हीं का गधा आप फलक में डालकर मसीजते हैं । हे सरबारा ! समझ लेना ।

७३ राजस्थान के भीर छद्म अथ और पराक्रम में दुर्भीर रहे परन्तु आज तुम पर सारा भारत ईश रहा है । हे सरबारा ! समझ लेना ।

७४ अत्यन्त स्वार्थ में पकड़ तुम कुम्ह के मार्ग का मुख गये हो । तुम्हारी जाति रक्षातल जा रही है । हे सरबारा ! समझ लेना ।

१ देश के लिए अपना बलिदान कर देना भारत के पुराने क्षत्रिय मुख गये, जिससे अबका सारा सम्मान बड हो गया, अपने अपना महत्व को दिया ।



फरस पैस छद्म क्यूँ इसो फाँसी चढ़यो ।  
 दिस गांधी-री देख भयो भरोसा मानिया । ॥१०॥  
 जादू-झरकी-जोर परतंतर भारत पढ़यो ।  
 तप गांधी रै तोर भबडै ऊठयो मानिया । ॥११॥  
 फौजों राडै फिरंग-री, ताकै नरु ठरमार ।  
 गांधी ! तैं लीखो गणप भारत-रो भुज भार ॥१२॥  
 पूगी समरों पर सीता समी मुर्तवता ।  
 तप-बळ गांधी तार भारत जायो मानिया । ॥१३॥  
 पड़वी धाक प्रचंड हिंसावासी हिंद-में ।  
 गिटगो जिहा समंड भारत गांधी मानिया । ॥१४॥

सुमापर्वद्र वसु

सूरै करी सुमास हाथां सेन्य हिंद-री ।  
 जगगी जगमी जास मारत मुझै न मानिया । ॥१५॥

१०. कदाचित् वह बहम करते कि ईसा जौड़ी पर क्यों गया ।  
 परन्तु गांधी की ओर देखकर भरोसा हो गया कि उसका यह कार्य  
 धार्मिक था ।

११. माओ जादू की कण्ठी से भारत परकण्ठ हुआ पड़ा था । गांधी  
 के तप के तेज से वह भयभीत होर जमाकर उठ पड़ा हो गया ।

१२. फिरंगियों की फौजों को रोकता है, पर उसबार नहीं रकता ।  
 हे गांधी ! तू है भारत के भार को अपनी मुखाधों पर गलन बिपा है ।

१३. सीता के समान भारत की कर्तव्यता समुद्र के पार पहुँच  
 पत्नी की । गांधी अपने तप के बल से उसे फिर भारत में ले आया ।

१४. लखवारियों की हिंसा की प्रचंड बाक देश में पड़ती थी ।  
 हे मानिया ! भारतवर्ष में गांधी उनके बमंड को निगल गया ( गांधी ने  
 उनके बमंड को चूर-चूर कर दिया ) ।

१५. दूरबीर सुमपर्वद्र के अपने हाथों जायाद हिन्द की चौक  
 तैयार को किसीकी जमि भारत में उल उठी है । वह डूबने की नहीं ।



करता वैस क्येक क्यू इसो फांसी पड़्यो ।  
 दिस गांधी-री इल भबो मरोसो मानिया । ॥१७॥  
 जादू-खट्खो-जोर परततर भारत पड़्यो ।  
 तप गांधी-रै तोर भबकै छठ्यो मानिया । ॥१८॥  
 फौजां रोके फिरंग-री तम्कै नह ठरवार ।  
 गांधी ! ई छीयो गजब भारत-रो मुज भार ॥१९॥  
 पूगी समझां पार सीता समी मुवतता ।  
 तप-बळ गांधी तार भारत कायो मानिया । ॥२०॥  
 पड़्यो घाक पचंड हिसावाळी हिंद-में ।  
 गिटगो जिह्वा पचंड भारत गांधी मानिया ! ॥२१॥

सुभाषचंद्र बसु

सूरै करी सुभास हाथां सेना हिंद-री ।  
 जागी जगमी जास भारत मुम्कै न मानिया । ॥२२॥

२. कदाचित्त यह बहम करते कि ईसा जमीं पर क्यों गया । परन्तु गांधी की पीर देखकर भरोसा हो गया कि उसका यह कार्य धार्मिक था ।

३. माधो जादू की खकरी से भारत परतन्त्र हुआ गया था । गांधी के तप के तज से यह ओझभेक जोर लगाकर उठ गया हो गया ।

४. फिरमियों की पीछी को रोकना है, पर तखवार नहीं रखना । हे गांधी ! तू ये भारत के भार को अपनी मुजाबों पर गजब जिका है ।

५. सीता के समान भारत की स्वतंत्रता असुख के पार पहुँच गयी थी । गांधी अपने तप के बख से इसे फिर भारत में ले जाया ।

६. शस्त्रधारियों की हिंसा की पचंड घाक देश में पड़्यो थी । हे मानिया ! भारतवर्ष में गांधी उनके पचंड को निपट गया ( जोहो ने उनके पचंड को बूर-बूर कर दिया ) ।

७. गुरहीर सुभाषचंद्र ने अपने हाथों जागाद हिन्द की जीम नया की जिसको जिन-भारत में जल उठी है । वह तुम्हें को नहीं ।

मन्दार ऊँ भाव कर्म कोण रोख्य करै ।  
 है सुवर्ण हिमपाय मरै बाध कृण मानिया । ॥२६॥  
 सोय साव समर मीठा करखा मानसी ।  
 पर्यवता-रो फर भारी कदय मानिया ॥ ७॥  
 गवरी दियो जगाय, मारत जान्यो जोम भर ।  
 ईशो भाव छाय मुख-बल नेहरू मानिया । ॥२७॥

## २२ साहित्य-री महिमा

सत अर्चन संवेस चारण ऊजळ ऊपरै ।  
 दीवै वां-रो वेस ज्यों-रो साहित जगमगै ॥१॥  
 साहित ब्रह्म-धर्म समवै प्राण समाज-सै ।  
 रमै समे-अनुकूल जग फलदाता ऊदका ॥२॥

११ सूर्य जगमगता हुआ उदय हो रहा है । उज्ज्वली कला को रोझने  
 मन्दार कोल कर सकता है । जब भारत स्वतंत्र हो चुका, इसमें कीन  
 मन्दार उत्पन्न कर सकता है ।

१० सत्य प्रसूती को भीरा बचा देना अनुभव के किम् सहज है  
 पर परलोक के चढ़े की कदवा बचा कठिन है ।

१८, सोयी के जारन को जगा दिया और भारत कोश में धाकर  
 जाग बसा । उध जाज है धानिया । सुखायी क बल स कहक ऊँचा  
 उदय रहा है ।

११ चारण उदयरान सदा और अर्चन बहिर सुनाता है कि उन्हीं  
 का देश जगमगता है त्रिभुज साहित्य जगमगता है ।

२ साहित्य ब्रह्म का ही स्वरूप है । वह जगज में वास धरता  
 है । उदयरान कहता है कि वह जगज के अनुकूल अपने रूप का बरकत  
 हुआ देखता है ।

धीमा पण रापी गहरी जड़ ऊँची गयी ।  
 सैराङ्ग छागी भारत भ्याम्य भानिया ! ॥२०॥  
 आया समंद उछलन की दुममय शबल करे ।  
 राम अने रहमान भारत भन्य भानिया ! ॥२१॥  
 दिव जाण्ड होम्मी ठठै प्रजा-रै आग-री ।  
 र । दुसण्या रोम्मी भारत-माता भानिया ! ॥२२॥  
 उम्टै जिस असमाण तारामण तूट रय्य ।  
 हे भेषक दिव्याय भूमी फँपै भानिया ! ॥२३॥  
 गया फाँस-रै घाट, कोड़ां जायण री करे ।  
 विरट रूप पैरट भारत धारै भानिया ! ॥ ४॥  
 कीड़ी-बल्ल रै कोप कुजर नख जीबै करे ।  
 रुपी प्रजा पग रोग भारत जीतै भानिया ! ॥ ५॥

१ अत्याचारियों ने भारत की हड्डि घना को खूब दबाया पर  
 दबाव से उसकी जड़ भीर गहरी खड़ी मयी । वही भारत की घना कम  
 अहरे मारने लगी है ।

२। समुद्र में उछाल या मया है । शत्रु बड़े कहीं तक दबा  
 मडके है ? आज भारत में राम और रहमान दोनों एक साथ हो गये हैं ।

३। अब प्रजा के हड्डियों में जमिनी की होम्मी-सी उठ रही है ।  
 चरे । दुष्टों ने भारत-माता को खूब रौंदा था ।

४। मावो आत्ममान उछल गया है । घने-से दूध रहे हैं भारत की  
 जम्हा जोय से भर उठी है, पून्ही कपावमान हो रही है ।

५। घबैलों मीठ के घाट कजर पन करौनों कतरने की लेवती  
 कर रहे हैं । आज भारत अर्पकर विराम रूप भारत कर रहा है

६। चींटियों के दख के लुपित होवे पर हाथो खड़ी वही जी  
 मकता । आज भारत की प्रजा पग रोपकर कम मयी है । भारत की  
 विजय अवश्य होगी ।

यह सब ठीक माण्ड कर्म कोण रोख्य करै ।  
 सुखत्र दिवबाय, भरै बाय कुण मानिया ! ॥२६॥  
 गोण सात समंद मीठा करया मानिया ।  
 रतंत्रता-रा पंद भारी अटय मानिया ! ॥२७॥  
 पांवी दिखो जगाय भारत नाम्यो जोम मर ।  
 ईशो आज कठाय मुख-बस नेहरू मानिया ! ॥२८॥

## २२ साहित्य-री महिमा

सुत अरुंधत खिसि जाण्य अजस्र अचरै ।  
 दीपे बा-रा दस ब्या-रो साहित्य जगमगै ॥१॥  
 साहित्य जग सरूप समपै प्राण समाज-नै ।  
 रमै समे-अनुरूप रंग पण्डितो अदका ॥२॥

११. सूर्य जगजपाता हुआ बढ़प हो रहा है । उसकी कक्षा को रोकने में पाण्डव कीम कर सकता है । जब भारत स्वतंत्र हो चुका, हममें कीम केनेह उत्पन्न कर सकता है ।

१०. पाण्डव धनुषी को पीछा क्या देना अनुष्य के किन् पाण्डव है पर परलम्बा के चंद का करना क्या करिब है ।

१८. पांवी ने भारत को जगा दिया और भारत जोश में भरकर जाग उठा । यह बात है मानिया ! तुमझी के बस से नेहरू ईशो उठा रहा है ।

११. भारत उदधराज मया और अरुंधत अदित मुवाला है कि उन्ही में देश जगजपाता है त्रिपदा साहित्य जगजपाता है ।

१. साहित्य जग का ही स्वकर है । यह समाज में पाण्ड भरता है । उदधराज कहता है कि यह समाज के अनुकूल करने कर को बढ़ावा हुआ लेखता है ।

साहित्य-रो संचार आये ऊँची आत्मा ।  
 आत्म-बल आधार संकट मिटै समाज-रा ॥१॥  
 जब-जब किसी समाज-में आये पतन अबाग ।  
 नीली संपत्ति बाबू है इस साहित्य अनुपाग ॥४॥  
 चौड़े कम-ऊँचे आत्म-रै आमास-नै ।  
 साहित्य सरसाबै सगळै हंस-समाज नै ॥५॥  
 राजनीति-रा-राग स पड़े विपद जब पूर ।  
 दूर करै दुःख देस-रो के साहित्य के सूर ॥६॥  
 रे ! साहित्य रत्नबान-रो रुझावो जोर रत्न ।  
 सेवक देस-समाज-रो म्याँ-रो करो बतल ॥७॥  
 रग-रग बहगो रोग दास-भाबू-रो देस-में ।  
 नई करण निरोग थेक न साहित्य भोजनही ॥८॥

१. साहित्य का प्रचार आत्मा को ऊँची उभरता है । और धर्म बल के आधार से समाज के संकट दूर होते हैं ।

२. जब-जब किसी समाज में गहरा पतन या बाधा है तब-तब इसी साहित्य के प्रेम द्वारा नवी हुई संपत्ति बौद्धि है ।

३. साहित्य आत्मा के रोम को सुखे धाम कमकाता है । वह सारे देश और समाज को खींच और सुन्दर बनाता है ।

४. राजनीति के रोम के कारण जब देश पर पूरी विपत्ति का पड़ती है तब देश के दुःख को या तो साहित्य का शूरवीर ही दूर करता है ।

५. अरे ! एत के समान ज्योति बाबा राजस्थान का साहित्य बाल को प्राप्त हो गया है जो देश और समाज की सेवा करने आया था । उसकी रक्षा का काम करो !

६. देश में रघु-राम में हनुमान का रोम घुस गया है । बलको बीरोम करने के बिना लोकमात्र जीवधि विविध रूप से, साहित्य ही है ।

साहित्य विना समाज-में साहस रहै न सत ।  
 सत साहस विन सयदा जीवण दुखी जगत् ॥ ६ ॥  
 दुष्टिवा-नै नेहो ह्यै निरजीवां सरजीव ।  
 साचो सैव समाज-रो साहित्य सबस्य सवीव ॥ १ ॥  
 पिछ साहित्य क्रिय बार क्रिय जाती जगति करी ?  
 राजधान-सिप्यगार ग्यो साहित्य बिगल गयी ॥ ११ ॥

गो बिगल, साहित्य गयो राजधान-रो रम ।  
 पय बूझ नीचै पदथा अप्पै गुण अनुकम ॥ १२ ॥  
 अप्पै माहित आसरै छी तीख राजधान ।  
 माचो पय सुतत्रता साहित्य-रो सममान ॥ १३ ॥  
 रठो पीर राजधान-रो ! साचो मंत्र सदीव ।  
 जीवै इस-समाज बै साहित्य जिनां सजीव ॥ १४ ॥ १ ६

१ साहित्य के बिना समाज में न साहस रहता है, न मरव । मरव और साहस के बिना जगत में जीवण सरा दुखी रहता है ।

२ साहित्य दुष्टियों को पहारा देता है वह निर्जीवों को मजीव बनाता है । साहित्य समाज का सचा मित्र है वह सरा ही कलबाव है ।

३ साहित्य के बिना कब क्रिय जाती है जगति की है ? राजस्थान का अन्तर साहित्य जला गया और जलो मरी (अब साहित्य को जगमगाती) दिगल जाता ।

४ साहित्य जला गया दिगल जली गयी जो राजस्थान क मौजूद न । इसलिसे आज हम जगत के अदकर नीचे जा रहे हैं ।

५ अब साहित्य के कारण राजस्थान सब में ठीका रहा । साहित्य का समान हो स्वतंत्रता का लका मार्ग है ।

६ है राजस्थान के बीरो ! सरा वह जला मंत्र जपते रहा—के ही इस और समाज जोति रहते हैं जिनका साहित्य जीवित है ।

## २३ उपसंहार

दूहा दुकहा दाम बोझा सोई व्यापसी ।  
 व्यावर लणी बिराम बांझ न जावै बीमरा ! ॥ १ ॥

गुण-सागर वृद्धा धनी गाह महली सार ।  
 गीत-कवि त परधानदा बीम्य पहरेदार ॥ ॥ ४१ ॥

१ दोहों ( कविता ) दुकनों और दामों ( धन ) को जिससे जो  
 है वही ( उनके जोखने की कठिनाई को ) जायेगा । हे बीमरा ! प्रसूना  
 बेदना को बांझ नहीं जान सकती ।

२ गुणों का सागर बोहा राजा है, माहा अन्तरु की शिरोमणि  
 ( राजा ) है गीत और कवि मंत्री हैं दूधरे कन्द पहरा देवेदाई  
 धिपाही हैं ।

# अनुक्रमणिका

अ ( १ )

अकनईपारी	नयमबी	६१६
अजबिसबासी	बीबा	६१७
अठ	स्वारथ-में	२०४४
अधिक	सूर के हूँ	१६१२१
अपना	सहित	आसुरै
अब	गांधी	आधार
अमल	कचोली	कमल
अरि	नेहा	पिं
अबर	री	अमान
	सू	५१६

आ ( ११ )

आ	कमलैवी	कंवरी	१०१६४
आ	पर-रोमी	कमली	४५५
आपा	पड़वा	ओमगण	१५३
आज	परे	सासू	१२५५
आको		अ बुद्धो	५४७
आप	जियो	मह	२०१२८
आपे	ही	आपापसी	६६
आपो	समह	कमल	२१२१
आपुप	मह	अनेक	६२४
आहव	मै	आधार	६१७
आदा	आसू	आप-रो	११७०

( ૪૧ )

૪ ( ૩ )

[૧૬ થર પૈસ વિગ્રામીયૈ ૧૧૧૬]  
 ૧૧૧૬ ૧૧૧૬ ૧૧૧૬  
 ૧૧૧ ૧ ૧૧૧ ૧૧૧ ૧  
 " ૧ ૧

૬ ( ૨ )

૬૧૧ થર-૫૧૧ ૧૧૧ ૧૧૧૬  
 ૬૧ ૧ ૫૧ ૧ ૫૧૧ ૧૧૧૬  
 ૭ ( ૨ )  
 ૧૬ ૧૫૧૧ ૧૧૧૧ ૧૧૧  
 ૧૧૧ ૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧૧૧ ૧

૭ ( ૪ )

૧૧૧૧૧ ૧૧૧ ૧૧૧ ૧ ૧  
 ૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧ ૧૧૧ ૧૧૧ ૧  
 ૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧ ૧૧૧  
 ૧૧૧ ૧૧૧ ૧૧૧૧૧ ૧૧૧ ૧

૮ ( ૩ )

૧૧૧ થર પૈસ વિગ્રામીયૈ ૧૧૧૬  
 ૧૧૧૬ ૧૧૧૬ ૧૧૧૬  
 ૧૧૧૬ ૧૧૧૬ ૧૧૧૬ ૧૧૧૬

૯ ( ૧ )

૧૧૧ ૧૧૧૧ ૧૧૧૧૧ ૧૧૧૬

૧૦ ( ૬ )

૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧  
 ૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧ ૧૦૧૧૧

और बहै गढ़ ऊपर १०।४६  
 और मुवा मुण ओहवै १३।३  
 और राग सब रागणी ४।२  
 और की फल जायिया ४।४

क ( ४१ )

कटकों तबल सुबकिरपा ४।१४  
 करता बैस कवक २१।८  
 कम्बु बमां-बी राबरा ४।२०  
 कलियो परगढ़ आप-री ४।१४  
 कहां गयो बा बीगता १।४३  
 कंधणी बंदै बरप १।४१  
 फंत ! परे किम आबिया १६।१८  
 कंब ! अयेको तू फिरै ११।०  
 कंब ! पतयै गोरब ११।११  
 फंव ! म राखो कटक-में १६।६  
 फंव ! बलीजै कुल ११।१२  
 कंध ! सुहायै मू करो १६।०  
 कंधा ! करक न लोबियै ४।४८  
 कंधा ! रण-में जायकर ११।६  
 कंधा ! रण-में वैखर ११।४  
 कंधा ! रण-में वैखर ११।८  
 कंधो गार किछे ६।२  
 कंध दिवै धर १।मेहण १६।३०  
 कंधर करे मांख-हू १६।१३  
 पापर झुडा जीपना १६।१२



( ८५ )

गत्रपट महि खोट १७८  
 फल भूकल नर लाय २५  
 लाग तयै बल लाय ८७  
 पाटी कुल-री सोबणा ४१६

ग ( १४ )

गड सिर म्हापा पाळणा ४०३  
 गया बाल-रे पाट २१२४  
 गाळ इतै ठलेळ गज २१६  
 गावण हूँ रे गजप १६८७  
 गांवारी सी जन्मिया २१४  
 गाधी दियो जगाय २१२८  
 गी बिगळ साहित गया २२१२  
 गुण-सागर बूढो पसी २३१  
 गै-इतो पाडा - सुरो २३३  
 गैवर गळै गळयियो २३  
 गाठ गया सब गड-रा १११३  
 गीमण 'म ह्हापुळी २३०  
 गीमणियो रतनाग्रियो २३१  
 गीप ममाड देवजो १०

घ ( १ )

घर-घर पैर बिमारिया १ १२७  
 घर पाडा बि अपपय १ १२५  
 घाय घण घर घतय २२२  
 घाय घरो सब बहे २३८

( ८६ )

५०१ पर दाना ५८३ ३१  
 ५०२ अमरा ५८३ ३२ १११४  
 ५०३ दाना ५८३ ३३ १११४  
 ५०४ अमरा ५८३ ३४ १११४  
 ५०५ अमरा ५८३ ३५ १११४

( ३ )

५०६ अमरा ५८३ ३६ १११४  
 ५०७ अमरा ५८३ ३७ १११४  
 ५०८ अमरा ५८३ ३८ १११४

( २४ )

अमरा ५८३ ३९ १११४  
 अमरा ५८३ ४० १११४  
 अमरा ५८३ ४१ १११४  
 अमरा ५८३ ४२ १११४  
 अमरा ५८३ ४३ १११४  
 अमरा ५८३ ४४ १११४  
 अमरा ५८३ ४५ १११४  
 अमरा ५८३ ४६ १११४  
 अमरा ५८३ ४७ १११४  
 अमरा ५८३ ४८ १११४  
 अमरा ५८३ ४९ १११४  
 अमरा ५८३ ५० १११४  
 अमरा ५८३ ५१ १११४  
 अमरा ५८३ ५२ १११४  
 अमरा ५८३ ५३ १११४  
 अमरा ५८३ ५४ १११४  
 अमरा ५८३ ५५ १११४  
 अमरा ५८३ ५६ १११४  
 अमरा ५८३ ५७ १११४  
 अमरा ५८३ ५८ १११४  
 अमरा ५८३ ५९ १११४  
 अमरा ५८३ ६० १११४

( ८० )

बित्तु नायै तो बाप रे पारद  
 बीरुप अहो नाय २।११  
 मूय बन्नी नाय २।१३  
 अ लल मगा तो सली । १।१३०  
 अ मूवा तो अत भला १।१२१  
 व रण में बिहरोयता १।७५  
 भा करमी निण-री हुसी २।५  
 जोगय । पदसी नाय दल १।१३  
 म्यां गाया हित नाय २।४०  
 म्यां पर बबल सलाब २।४४

म ( ३ )

मयार बाभ्यां भगत - बन १।५  
 मुरै हम रंगरेखणी १।१०६  
 मू पवियां भव अकको १।२४  
 ट ( १ )

दीवा कर संताप १।५४  
 ठ ( ४ )

ठरुपणी सतिनां मयै नून पारद  
 ठरुपणी सतिनां मयै भनो पारद  
 ठरुपणी नेवा ठग रखा २।१११  
 ठरुपणी रहिया नाम-त २।१०  
 ड ( २ )

दिगता नद गद बाप २।१४  
 बाकर - री नुन - डड २।१६  
 ड ( ४ )

दास - दमावा पाजिय ७१  
 दास पदवी दल मित्रो ७२३



( ८६ )

रुण्णी माभी करे १०।४१

रस हठ बल्लिदान २१।२

ध ( १८ )

धण आग्र जागो धणी । १ । ७

धण । मुण याए धरम-सू १६।३

धन मित्र जाणै सम क्रियां ३।३

धन- धन धणिवाप ४।२८

धन ले बीर धावणी । १ । २१

धन विषना । तो लेखणी ११।१८

धर गुर्जर - री धाक २८

धर जातौ प्रम पल्लुता १।३

धर जिय धासक धूमती २ । १५

धरता पग धर धूमती २ । १७

धम् । जोब भव न्योपिया १६।२१

धमक पवै रे धणी । ५।४३

धमक सरीगो धमक ह ५।४१

धीर नगरो राज-रो १।२१

धीरविषां सूतो धणी १ । १२५

धीरा धीरा ठाकरा । १ । १२०

धीगा धण दाबी २१।२०

धीया पदमा धाप १८।१

न ( १३ )

नरिया नाक निगट १२।५

नर बापर जाले नही १६।४

नर जिय धिर गात्रिय नही २।२

नर मुग गावज नीह १।४७

नर पदाम बापर नर ११।२

दाख पर्वता हू सगरी । १०११  
 दाख सुर्वता मंगरी १११३७

त ( ६ )

तगा ! तगाई मत्त करे ४११२  
 तगा न जावे तोल ४१११  
 तन पर साही आडकर १६१३  
 तिरिया-री तरवार ०१४  
 तीतर कपा पटेर भर १६१८  
 तोरण जाता पाइल १०११

थ ( १ )

थाम बर्जतां हू सगरी ! १३१

द ( १० )

दख आमां वेलां तुई ६१ ३  
 दस झूठा दस झूठ्या २१४२  
 दिन दिन भायो वीसतो १३१८  
 दिन-म वेल् जूमतो १ १२५  
 दीनां ऊपर बाप २ १४१  
 दीपता जूमर व ११४  
 दुग सै मळे वेह १०  
 दुनियां-मै मळा दिवै ६२११  
 दुसमज बसां लूटर १६१२  
 दूष लबापो माय-रो १६१४  
 दूडा दुरडा राम २६११  
 दग सगरी ! मोटा गडा ४१२२  
 दग सगरी ! होळो रम १ १२२  
 दगरी नै निज योग भी १ १३५  
 दगा भारत दस २ ११२

( ८६ )

वरणी माभी कहे १०।४१

वस हेत बळिदान १।१

घ ( १८ )

घण आरत जागो घणी ! १०।२७

घण ! सुण घारा घरम-सू १६।३०

घन मिळ जाणू खम क्रियां ३।३

घन- बळ धर्णिमाप ४।१८

घन छे वीर पाइवी ! १।२१

घन विघना ! तो छेकणी ११।१८

घर गुर्जर - री धाक २।२

घर जातां प्रम पळटता १।३

घर जिण घासळ घूजतो २०।५

घरतां पग घर घूजती २।७

घसू ! ओबे मज ग्योबिया १६।२१

घसळ पधवै रे घणी ! ५।४३

घसळ सरीस्रो घसळ हे ५।४१

धीर नगारो राज-रो १।२१

धीरपियां सुता घणी १।५५

धीरां धीरा ठाकरां ! १।२

धीगा घम हावी २१।२०

धीरो पदयो धाप १८।१

न ( १३ )

नरियां माऊ निराह १८।५

नर अघर जावै नही १६।४

नर जिण तिर गाविय नही २।२

नर सुग गावळ मीरे १५।७

नह पदाम कायर नरा ११।२



( ६१ )

पूगी समेता पार २१।११  
 पूगे नीठ पिआपियो १०।२३  
 पूगीबै गब - मोखियां ८।१०  
 पूठ ! घणा दुख पावियो १६।१७  
 पोर चपुथै पौडियो १०।२६

फ ( ४ )

फिट कानूनां प्यस २०।२५  
 फिर-फिर मटका अ सदै ३।४  
 फेरुट डंग फिरंगाख २०।३७  
 फेबां ऐठै फिरंग-री २१।१०

ब ( ० )

बल छांदै कम-कम बरी धप  
 बंब सुपायो बीद-नू १।६  
 बाप सुपाय बापरां २।१३  
 बाबी बी बंगाज २०।१  
 बाप गया मे मापरो १३।६  
 बापक - सु बयमान ३।३  
 बटां बापां कृष्ण गुण २।६

म ( २० )

मब एठ बहियो बट पबै ६।२६  
 मब साई देवां पबै ८।६  
 ममदे वाप भरेइ १८।३  
 मय्यत्र छी भाय २१।३६  
 मनी प्यारा भीबदा ! २।२५  
 माय मय नू कमहा ! ११।१  
 भाग्ये कंठ लुकाय पय ११।१७  
 भाट ! पयस दिव भायता १।७४



माता हित मरखो	१।२
माया सै है ठाकुर ।	१६।६
मासखो घर-आगयै	६।१०
मिछे सिष बन माह	५।१
मूह न दिखै पर-आखिचै	५।१४
मन भबमो हे सखी !	१०।४७
भँख न्यक मिर खे मुगट	१६।२६
मैं परणती परगिया वारण	१।३
मैं परणती परगिया न्यह	१।७
मैं परणती परगियो मूखा	१०।६
मैं परणती परगियो बागा	१।१४
मैं परणती परगियो साजन	१०।८
मैं परणती परगियो सूरख	१८।२
आखि भर बेई मुजै	५।१७

य ( १ )

मा सुखग गारो करी	१६।१४
र ( ८७ )	

रग - रग पदम्यो राग	२८।८
रखता आइतु रुनडा	८।४
रजपूना गुण पूछनी	५।२
रजपूनी आपुछ बिती	३।४
रजपूनी नव ग्या दिवा	१६।६
रज-पद नई दीडी मन्वा !	३।२
रखना मंत्र सुराम	२१।४
रखता दुममय राग	२१।१६
रखा पीर रजधान-ध ।	२८।१४
रख करिय	५।६



बाँझ भइ बानैत १ । १०  
 विष्णु मरिषा विष्णु जीविया ११ । २३  
 विष्णु माघै बाढै धम्म २५  
 विष्णु साहित किण बार २२ । ११  
 विष बहुरां बह संगजा १० । ४६  
 विधत्ता अपणै शय-सू ५१  
 तिस ग्याषा कै सरण छो १६ । ६  
 बीरपणा पारख करो १६ । १०  
 बीरा-रस-बी बिचरुपै २० । १६  
 बीरै बोस सुभास १ । १६  
 बीर रहीनै राज पर १५ । १  
 बैरी - बाई पासही १ । १२६

त ( ४९ )

सली ! तन्हीका कंठ-नै १० । ४५  
 सली ! भरोसो माह-रा १ । १५  
 सली ! हमीणै कंठरी असा १ । १२  
 सली ! हमीमै कंठरी पाबो १ । ११  
 सली ! हमीलै कंठरी पूरी १ । १  
 सब अद्वैत मंदम २ । १  
 सब - हीना सरदार ५१  
 सदा रक्षा राजधाम १४३  
 समर सिपाह - सभा १६ । ५  
 सहिभ ! मा विह पाण्डिपो १ । १  
 संवत्ति ! और निसक भय ११ । २६  
 सादृश्य जायै समा ५५  
 सादृश्य किण ही समे ५७  
 सामू जायै वहीरी १२ । ७  
 साहित मत्र - मन्त्र ५१

साहित - रा	मंवार	२५
साहित यिता समाज-में		१६
साई ! ओहा भोषडा		६५
साई-मू	सप्यो	रहू
सांभर	बारड	सीग-रा
सिर नह	सीगो	संबरी
सिध न	पूछै	पं० क०
मील	राज-री	हाथ तो
सीगान्य	अन्यगण्यो	
सीद्वय ! इका सोह	जय	
सीह न	वाजा	ठाकरा
सीदा	देस	विदस
सुन	मरिचो	सुत
सुत !	कर जे	हित बस-रा
सुत	भाए	रज-रज
सुत	मरिचा	हित बस-रै
सुभ -	हीन	सरदार
सुता	पर - पर	आजसी
सुतो	नाहर	नीह
सुभो	राजवत	परज्या
सूर	इपाई	बर
सूर न	पूछै	टीपयो
सूरा !	रण म	जाय कर
सूरा	सोह	पिछाजिबै
सूरा	कोटो	सूरपण
सुबर	सुतो	नीह
सुरै	करी	सुभास

सुरै	सिखगायी	१।१५
सज-पमोवा किस	सखा	१०।५०
सोनारी भूरै	कड़े	१६।२५
सोण सात	सुमै	२१।८७
सो गुण बाहु	दकनै	११।३४
स्याम उपारै	संछटा	पावे

ह ( २२ )

ईमा बासो	मानमर	६।
हाथ-बल निरनै	द्वि	५।०
हिम्मत हिम्मत	होव	२।१
हिरणा काशी	सीगडी	५।६४
हिब जाणक	होम्मी	२१।०
हिंसा	धारणहार	२।३०
हु भागे पाबो	हुये	११।०५
हु बलि तरी	पणिया	१५।१०
हु पछि तरी	पणिया	१०।६
हु बलिहारी	पणिया	१।११
हु बलिहारी	माभिया	८।११
हु पणिया	जय	५।३७
हुका भयत न	जर रहे	६।१
हुली ! की	अपरज	१०।३३
हुली ! गद	रहसी	१।१६
हुली ! विन-तिन-कंत	रे	१५।०
हुली ! पीपर	पणिया	१।५४
दे मिपणिया	आम	११।०
हो न	पणिया	५।२३
हाथै पर - पर	हाथ रे !	१।३८

## ८. किसनसिंह (सेतकी)

महाँ मोरों मधुमरों, राखों याही रीत ।  
 किसन बडाथा इरइलै यमै न बडिया भीत ॥८॥  
 कडिया माग पधारजो कँवर ज मुरघर दस ।  
 फूवाणो छात्रै जिसो साहाणो किसनेस ॥९॥  
 भारै जोइँ किसनमी, जगो कँवर अमेर ।  
 धोकन हूयो करणरै पदमो पीकानेर ॥१०॥

## ९. महापणा जयतसिंह (पदे)

सिंधुर दीभा छात सो बैबर छपन हजार ।  
 चोरासी सासण दिया जगपत जग-बाजार ॥१॥  
 करणरै जगपत कियो कीरत आज कुरख ।  
 मन बिज घोळो छे मुखा साह दिखीस सरख ॥२॥  
 जगतो तो जायै नही मात-पिताय नम ।  
 तात-पिता रततो रहै निसदिन यो ही नाम ॥३॥

१. मुरघर दस—मातवाह वहाँ 'ओबपुर' के विशेष धर्म में प्रसुक्त व होकर 'राजस्थान' के साधारण धर्म में प्रसुक्त हुआ है । काकी फूवाणी—कपड़ का सुपसिद्ध दानी और बीर राजा । साहाणी—साहाय्य का देता ।

२. है कियानसिंह, तुम्हारी ओजो का दानी कबिर का राजकुमार-जगतसिंह है या एक पदमसिंह बीकानेर में करखसिंह के वहाँ हुआ या ।

३. जगत के दानी महाराजा जगतसिंह ने मात की दानी कपड़ हजार बोड़े और चोरासी गाँवों के पराने दाव में दिये ।

४. करखसिंह के बड़े जयतसिंह के कीर्ति के दौरे वह महान् कार्य किया जिसका बोझा मनमें धिये ही दिखी के छाये ।

५. जयतसिंह माता के नि (जयति वह कभी या-या नहीं करत) 'दादा' का नाम (जयति दाना-दान)

मोह, छरछे पारेषदा जगपतरै दरपार ।  
पीबोन्ही पाणी वियाँ क्यु बुझाँ कोटार ॥१५॥

१ महाराजा भीमसिंह

राणै भीम न रुक्मिण्या बल बिन दीहाबोह ।  
हय-गयंद पतो हबों मुबो न मेयाबोह ॥१६॥  
भीमा ! तू माटो मोटा मगर मॉयबो ।  
कर राखूँ कठो संकर जूँ सेया करू ॥१७॥

१८ ठाकुर जंगारसिंह ( सोर )

झाडाणी जस हँटियो माडाणी जग मॉय ।  
धीरत-हँदा कोरदा जाता जुगाँ न जाय ॥१८॥

१९ हे परमात्मा ! हमें जगतसिंह के दरबार के कपूत बनाया  
रघुवीरजीजी में पानी विरें और कोटार में भद्र बुनत रहें । ( पीबोन्ही—  
रघुपुत्र का सुपमिह वाक्य ) ।

१९ महाराजा भीमसिंह ने चोक भी दिय बिना दान का ( जिस  
केन दान न दिया हो वैसा ) नहीं रखा । हाथी न हाथी और बाघे दान  
करता हुआ वह मेवाज का जविरवि नाबो धामी एक नहीं मरा है ।

१७ हे भीमसिंह ! तू बड़े बहादुर का पत्थर है जिसे मैं अपने दान  
रक्मिण्या और लंकर की भाँति टूटन करूँगा ।

१८ हे झाडावाक के संतत ! तुमने जगह में जवर्दस्ती बल का  
सूर दिया । कीर्ति के के काद बुझों के पीछ जाने पर भी नहीं तुमारे जायेगे  
( जगज्जग कोरदा-विज महक ) ।

## महापद्म प्रताप का उदर

तुरक कहासी मुग्य पतै हण्यन-सूँ, इच्छंग ।  
 छगै म्योही ऊगसो म्योही बोच पतंग ॥११॥  
 मुसी हूँत पीयल कमध । पटको मूखों पाय ।  
 पछटण दे अतै पढो क्यमों सिर कैयण ॥१२॥  
 सोंग मूँड सहसो सका मम-जस नहर सपाह ।  
 मइ पीयल ! जीतो ममों यैय तुरकसूँ बाह ॥१३॥

## आठ्ठा पुरसा कृत

अकबर पार चौधार छेपाणा दिवू अपर ।  
 जागै जग-बातार पाहरै राज प्रतापसी ॥१४॥  
 अकबर समैह अबाह तिहँ जूबा दिवू-तुरक ।  
 मेबाको तिण साहि पोचण फूझ प्रतापसी ॥१५॥

११ भगवान् अकबिन्ध इस तरीक ( चर्चा कर्म ) में प्रताप मुग्य से अकबर के बिन्दु तुरक समूह ही कहलवानेसे जीर सुर्च जहाँ उभरा न बही पूर्व दिशा में उभेगा ।

१२ हे रामोह दुम्भीराज ! कुली से अपनी मूर्खों पर तान दो अब तक बच्चों के सिर पर लछवार पकावने के बिन्दु प्रताप जीवित है ।

१३ यह प्रताप अपने माने पर छाँग का महार अहंगा कबौलि बरानरबाके का बल मनुष्य के बिन्दु बिन्दु सैधा ( अलख ) बोधा है । हे जीर दुम्भीराज ! तुर्क के छात्र बच्चों के बिबाह में बिजयो होयो ।

१४ अकबर और अल्लखार है जितमें सब दिवू मित्रा-बन्ध हो गये । परन्तु जगत का बातार राजा प्रतापसिंह बहरे पर कहा आय रहा है ।

१५ अकबर पाहरा समुद्र है । उसमें दिवू जीर मुखमात्र सभी बूझ गये । परन्तु उस समुद्र में मबाह का राजा प्रतापसिंह कमल के फूल के भाँति उबर ही स्थित है ।

अम्बरिषे इन्द्रवार बागल की सारी दुनी ।  
 अम्बरवार असवार रहियो राज प्रतापसी ॥१३॥  
 अम्बर जासी आप दिखी पासी दूसरा ।  
 पुन-पसी परताप । सुनस न जासी सुरमा ॥१४॥  
 अम्बर ! गरम न आप दिवू सह चाकर हुआ ।  
 दीठा कोह दिवाप करतो कटका कटका ? ॥१५॥  
 मन अम्बर मजबूत फूट हीरकों मजबूर ।  
 काकर-काम कपूत पकड़ू राज प्रतापसी ॥१६॥  
 अम्बर कीन्हा पाह हीवू नूर शानर हुआ ।  
 मरुपाट-भरजाह पग लागो न प्रतापसी ॥१७॥

१३ अम्बर ने एक ही बार में घाटी बुनिया ( के घाटी ) के बाग  
 लगा दिया पर राजा प्रतापसिंह जिहा बाध के बोधे पर ही अम्बर रहा  
 ( अम्बर ने अपने जमीनस्थ सरदारों आदि के बोधों पर राज लगावाये की  
 गया जारी की थी ) ।

१४ अम्बर स्वयं गया जायगा और दिखी दुमरों के हाथों में लगी  
 जायगी पर है मजबूत और दुश्मन की राशि मजबूत ! हेरा सुबह कभी  
 नहीं जायगा ।

१५ हे अम्बर ! तुम्हें अब मत कर कि अब दिवू को चाकर बन  
 पड़े । गया किसीने दीवाप ( महाराजा प्रतापसिंह ) को कटका के घाटी  
 करके करके देना है । करका-कामला, कवाह मुक-मुककर प्रताप करना ।

१६ अम्बरवाप दिवूओं में परस्पर फूट है और अम्बर का मन  
 रह है । वह नाकत है कि अकितों को बीच में केवल प्रतापसिंह ही कपूत  
 रह गया है ( बाकी का अभी कपूत की आदि मरा कहना मानते हैं ) ।  
 इस भी कहें थू ।

१७ अम्बर ने बार किये जो लगी दिवू राजा अक अक करक  
 उसक कामने हाथि हागव ( और जमीनका रबीकर कर ली ) पर  
 मेराह का मर्पाहसकर राजा प्रतापसिंह उनके नेतों नहीं रहा ।

मणों आगम्य माथ निवै नही नर-नाथरो ।  
 सो करतब समराथ पाछै राण प्रतापसी ॥२१॥  
 बुझा बबरा बाट पाट तिक्य पहणा बिसर ।  
 खाग-त्याग-स्वययाट पूरो राण प्रतापसी ॥२२॥  
 कहै न नामै कंच अरुबर डिग आभै न आ ।  
 सूरज-वस सर्वष पाछै राण प्रतापसी ॥२३॥  
 अरुबर कुटल अनीस, धोर बिटल सिर धारै ।  
 रघुबुझ-वचन-रीत पाछै राण प्रतापसी ॥२४॥  
 छोपै हिन्दू बाण सगपण रोपै सूरज-सूँ ।  
 भारण-कुम्हरी आन पूंजी राण प्रतापसी ॥२५॥  
 अरुबर पबर अनेक, कै भूषण भेष्य दिया ।  
 हाथ न छागो हक पारस राण प्रतापसी ॥२६॥

२१ जो बरों का नाथ है उग्रका मस्तक मोक्षकों के जागे नहीं झुग सकता—इस कर्णव्य का पावन कबल समय प्रतापसिंह ही करता है ।

२२ जिस मार्ग पर बड़े अच्छे हैं उसी मार्ग पर चलना चाहिये । जिनकों में इस वत का पावन करनेवाला थोड़ा बहुत ( बचाने ) और बाण ( श्रेष्ठ ) में पूरा महाराजा हो है ।

२३. वह राजा न तो कभी अरुबर के पास जाता है और न मस्तक ही झुगता है । प्रतापसिंह सूर्य-वक्त्र के सम्मुख का पावन करता है ।

२४ दूसरे दिगवे हुंसे राजा अरुबर की कुटिल नीति को सिर पर रखकर धारै बैठे हैं पर राजा प्रतापसिंह रघु के वचन की उत्तम रीति का पावन करता है ।

२५ हिन्दू बाणों को छोप करते हैं और मुसलमानों के बाण विनाश-सम्मुख स्थापित करते हैं । आन धर्म-कुल की पूंजी तो नेकमात्र प्रतापसिंह ही (रख गया) है ।

२६ अरुबर ने अनेक राजाकुसी पारसों को हथड़ा कर रखा है । पर पारस परभर के समान थोड़ा राजा प्रतापसिंह अरुबर के पैरों में जाकर नहीं गिरता ।

मांगा घरम-सहाय बाबरसँ भिड़ियो बिहम ।  
 अकबर कर्मो आय पकै न राज प्रतापसी ॥२७॥  
 मुग दित स्याम-ममाण हीनू अकबर-बस दुषा ।  
 रासीखा भगराज पजै न राज प्रतापसी ॥२८॥  
 अकबर पूर अजाण हिया-कूर छाडै न इठ ।  
 पगौ न सागण पाण पणपर राण प्रतापसी ॥२९॥  
 अकबर हिनै उपाट रात बिबस आगी रहे ।  
 राजपट-पट-समराट पाटप राण प्रतापसी ॥३०॥  
 जग जाहा जूमर अकबर-पग बाँपै अघिप ।  
 गङ-रागण गुजार पिङ्ग-म राज प्रतापसी ॥३१॥  
 अकबर कमै अनक नम-नम नीसरिया जपन ।  
 अनमी रहियो अके गुहमी राण प्रतापसी ॥३२॥

२ परम की महापता के बिषे महाराजा लॉगा अकबर स भिड़ा था । ऐसी परम्परा क बाधन के बिष राणा प्रतापसिंह अकबर के पैरो में बाध रही गिराया ।

२८ सुख-भाग के बिब हिन्दू राजा गोदवो की भौति अकबर के बल हो गय पर राबबाहे सिंद की भौति राणा प्रताप उनक पैर में नहीं आया ।

२९ मोक्ष और मृत अकबर की इराद की (घोरी) कूट मची इ जो बह बनना इह नहीं सोचता । सिद्धा का बाधन करनेवाला राणा प्रतापसिंह उनक पैरो पहुँचेवाला नहीं ।

३० अकबर का इराद राज-दिन उबरा रहता है । राणा प्रतापसिंह बहिषों क धर्म का बाधन करनेवालों में बाबरों मज्जा है ।

३१ उगाव स जो बहव न बाधा इ जैस राजा भी अकबर क पैरो की मचा काठ इ बान्नु गुप्ता आर गय का एक बनावसिंह अकबर क इराद में बिबाध काठा है ( प्रताप के कारण अकबर क इराद में मचा बिबाध हो रहता है ) ।

३२ अकबर के बल अके राजा मुद मुकबर बिब । गुप्ता पर एक बनावसिंह हो उनक जय रही मुका ।

भागै सागै माम, अमरत छागै ऊमरा ।  
 अरुबर-रुद्र आराम पेसै बहर प्रतापसी ॥३३॥  
 सपसु कर संझासु सावस्ये भूखो सुखै ।  
 दुम्भट जोड कपासु पैड म बंध प्रतापसी ॥३४॥  
 अरुबर मैगल अरु मर्मसु रुद्र भूमै मसत ।  
 पचानन पसु—भरुसु फटके रुद्रा प्रतापसी ॥३५॥  
 ओ जो अरुबर-काह सैषय कुजर सौबठा ।  
 बोंस ठो बरताह पंजर बया प्रतापसी ॥३६॥  
 बडी बिपत सह बीर बडी कीत लाली बसु ।  
 धरम-धुरंधर धोर पीरस भिनो प्रतापसी ॥३७॥  
 जिणरो बसु बग मोंहि जिणरो बग भिन बीवणा ।  
 नेहो अपबसु नोंहि, पणधर भिनो प्रतापसी ॥३८॥

३३ राजा प्रताप की को साव सिधे भागता है और उदुबर भी उसे मयूत के समान खगते हैं पर अरुबर की आजीवता में रहकर आराम को वह बिच के समान समझता है ।

३४ प्रतापी सिह के समान राजा प्रताप संघम करके भूखा सो जाता है परन्तु रुद्र का मार्ग खोजकर दूसरे मार्ग पर पैर नहीं रखता ।

३५ अरुबर गड हाथी के समान मस्त होकर रुद्र म बिचरत है परन्तु मीन कावेवाले सिंह के समान प्रताप अकेला ही उसे हथेली भार कर गिरा देख है ।

३६ ओ जो अरुबर के मयूत बोले और हाथी है वे हे प्रताप ! ठो पीछे भलाते—भालते जस्ति पंजर मात्र रह गये हैं ।

३७ बीर राजा प्रताप ने बडी बिपति सहकर दुःखी पर बडी मारी कीति जर्जब की है । हे धर्म की तुरी को चारण करनेवाले बीर प्रताप ! दुम्भटा दुःखात्मक बन्ध है ।

३८ उसका जीवक बन्ध है त्रिपुका जगत में बन्ध है । हे प्रणधर प्रताप ! तू बन्ध है क्योंकि अपवश करे निबन्ध नहीं रहता ।

ब्रह्मामर धन ओह जस रह भ्यावै जगतमें ।

सुन-सुन गोनों वह सुपन समान प्रतापसी । ॥४६॥

धारण सूर्यय टापरबा कृत—

बसा यंस जलीस, गुर पर गल्लोठों-ठणो ।

राजा-राजों रीस बहनों मन फोड़ करो ॥४७॥

बसा बी तो का ह पोरस-नजो प्रतापसी ।

धारम अबरसाह अम्पियस आभजिया नही ॥४८॥

माथे मैंगल लाग ते बाही परतापसी ।

पौठ क्रिया ब भाग गोटी साबू तार गत ॥४९॥

सौंग ज सोपरजाह ते माही परतापसी ।

आ यावस किरजोह परा प्रगही कुजरी ॥५०॥

माथी मोह मराह पातल राज प्रयाद मल ।

कुजरी क्रिय ब्रह्माह बस मैंगल राजपु लखा ॥५१॥

४ जगत में बस रह जाव-बही जगर और जगर धन है ।

५ ब्रह्मामर । देह में सुख और दुख का समान कल्याणो है ।

६ कुलीनों बंती के जन्मि गुणम है बसल गृहिणीतो का

पराव बदा है । बस कहते समय कोई राजा या राजा कोप न करना

( यथाकि बस कथन वास्तव में सत्य है ) ।

७ क्रिजोह के आशी प्रकाशनिह का बराहम रवि का वेद है

जिनको लुपतिह पर अकबर जरी भीता कभी नहीं जाना ।

८ है ब्रह्मामर । तु ने हाथी के माथ पर कलवार पहारी या

जल के हा दुहद कर दिव जिन ताह बाँध ब लापुन को दिविता अकर दो

दुहद हा जमी है ।

९ है ब्रह्मामर । तुन तुनदरी बरदा जमायो का बस हाथी के

यात्रा जाकर जिनको अब पद जमायो । राज बाराह का कोदकर चार बिज

जामी है ।

१० जकेक दुहो वा जोगेबाह बाह लाह को जगनबाह

ब्रह्मामर के बरवातो ब बर दो का हाथियो का म लो को ह कर दिवा ।

स्खलन-तणा सुमाण पारीसा पातल-तणा ।  
 तै राहिया राण । अकण-हुता ऊरवत ॥१२॥  
 ओही सुख अरीत, तसलीम जहीन-गुरक ।  
 भाबै मिकर मजीठ परसाइ कै प्रतापसी ॥१३॥  
 रोहे पातल राण जौ तसलीम न आदरै ।  
 होइ-मुस्सलमान अक नही ता बाय इ ॥१४॥  
 चाकी पीतोकाह पातल पैडवेसों तणी ।  
 रहयेया राणाइ आयो पण आयो नशो ॥१५॥  
 निगम निवाण-तणाइ, नागदहा नरहर सुईही ।  
 राबत-यठ राणाइ पिड अपरसू प्रतापसी ॥१६॥

जोधपुर महाराजा मानसिंह कृत

गिर-पुर देस गमाइ अमिया पग-पग भायरौ ।

मह अजसै मेयाइ, सह अजसै सोसादिया ॥१७॥

१२ अन्ध राजा मिही के बरतनों में बरोमा भोजन करवाव  
 ( सुमलमान ) हो गये । पछनों में परोसा भोजन ठा, हे उरवमिह क पुन !  
 अकेले दूने ही रगा है ।

१३ पराक्रम से ऐसी कुरीति हो गयो कि हिन्दू तुर्कों के आगे  
 झुककर सलाम करने लगे हैं । अक प्रतापसिंह ही मलिकों के ऊपर  
 दब-मन्दिर बनवाता है ।

१४ चिरा हुआ राजा प्रताप जब तक झुककर सलाम करवा  
 स्वीकार नहीं करता तभी तक हिंदू और सुमलमान एक न हाकर वा है  
 ( बही ता मनो सुमलमान हो जाते ) ।

१५ प्रतापसिंह तपुनों को काटने के लिए ठा जावा पर उनको  
 पांछा दब को बही जावा ।

१६ महाराजा प्रताप अपने बहाइ देत और मगनों का मरकर  
 पहलों में पैर-पैर पर भरकटा चिरा जिनके जात्र मवाए करवन्त लर्प  
 करता है और लाते सोमार्द्रवा जानि बर्बद करती है ।

## प्रकीर्णक

बाही राय प्रतापसी घगतर-म बरखीह ।  
 जाणक मीगर-जाळ-म मुँह अक्या मरखीह ॥६१॥  
 बाही राय प्रतापसी बरखी सपपण्योह ।  
 जाणक नागण नीसरी मुँह मरियो मरखोह ॥६२॥  
 पातल पद फलसाहरी अमे बिभूसी आय ।  
 जाण पही कर-बंदर बाही बह-पुण्य ॥६३॥  
 हीवू हीवूकर राणा ! ज रागत नही ।  
 अकबर वा अकबर वा सा करत प्रतापसी ॥६४॥  
 दिवूत परताप पत रागी दिवयापरी ।  
 मह पिळट संताप माय सपय फर आत्मी ॥६५॥

६१ राणा प्रताप ने कल्प म जो बरपा यज्ञाचो लो कपय को जाव  
 ध वूमरी चोर देखे निकली माचो मीगुर मरयो न जाव ये म  
 मुह निव्याहा ।

६२ राणा प्रताप ने कपक्या मुह बरपा यज्ञाचो । वह यज्ञो के माय  
 वूमरी चोर इस प्रकार निव्याहा जाला मोविम मुह का यज्ञो न नरकर  
 बाहर निकली ।

६३ जगजिह्व न जाकर बाह्याह को मवा को इस कटार वि हंस  
 कर दिया जालो देर उराय को पोधा कपरो के माय यह मवा हा ।

६४ हे राणा प्रतापसिंह ! बाहू दिवू अर्ध चोर दिवू अर्ध को  
 रजा न करण को अकबर को दुनिया को लोकाकार कर दया ।

६५ दिवू रवि प्रताप ने दिवूचो को प्रविडा को रजा को चोर दिवू  
 कटो को मकर को कपनो मीनका को कपनो को ।

## २—वाक्य

बाइलू जूम्य जब बस्यो, माठा आधी ठाम ।  
 रे बाइलू, । तें क्या किया रे बाइलू पर्योय ॥६६॥  
 माठा । बाइलू क्यो कहा रोह न मोम्बो मस ।  
 ज लग माकू साहे-सिर हो कहियो साबास ॥६७॥  
 सिध सिबापो, सापुहस अ सहरा न कहास ।  
 पडो जि-बुर मारिके दिनम सेय छठव ॥६८॥

## ३—महापद्मा अमरसिंह

हाहा कूरम राठयूह गोखो जोस करव ।  
 कूरयो कान्दकान्दने, वनवर हुवा फिरन ॥६९॥  
 तेंबरोंमू दिखली गयी राठोहो कनबूख ।  
 अमर पखेयै खानने सो दिन हिसै अय ॥७०॥

१९ बाइलू अब जूम्य के धिये क्या एक माठा आधी घीर बोली—  
 अरे बाइलू ! तूने कह क्या किया ? अरे तू सचमुच ही बाइलू है !

२० बाइलू उत्तर देता है कि हे माठा ! तुम मुझे बाइलू क्यों  
 कहती हो ! मैंने तो कभी रोकर आगे को नहीं मोँगा (जैसे बाइलू मोँगते हैं) ।  
 मुझे तो अब मैं बाइलू के सिर पर एकबार माकू तभी लाया है कहा ।

२१ सिंह, बाज घीर सुपुछ्य—वे छोटे होके पर भी छोटे नहीं  
 कहाते । वे अपने से बड़े जानवर को मारकर जब ही अर में उसे उड़ा भी  
 देते हैं ।

२२ आनघामा से आकर कहा कि, हाहा, ककुनाहे घीर राठोह—  
 वे सब रईम आज राजमहलों में आनन्द कर रहे हैं परन्तु हम वनघर बड़े  
 दुखे भरतु रहे हैं ।

२३ जिस दिन ठेवरों क हाथ से दिखली गयी घीर राठोहो के हाथ  
 से कम्बोज घूटा वहीं दिन महाराजा अमरसिंह आनघामा से कहते हैं कि,  
 आज हम विनार्ह ब रहा है ( आज हमारे हाथ से मेवाड़ सुरा दिलायी  
 गया है ) ।

## रहीम का उधर

भ्रम रहस रहस धरा, गिस जास सुरसास ।  
अमर यिसमर ऊरै राग मरुओ, राज ॥७१॥

## ४—महाराजा राजसिंह

माकपुरैय माक धनुपुरै धर धर क्रिया ।  
सबल दिन्हीरो माक ऊभा राजा राजमो ॥७२॥

## ( ग ) मागदाव

## रठोड़ वीरगनाध

राठाहोरो पुन-पिया सीमा गध न धरत ।  
ग्या भरतार न भवणा म भवणा न अवत ॥७३॥

## राज जगमत्त

राग-राग नया पादिया राग-राग बाहो राज ।  
बाबा पूछे गान्ही जग कय जगमात ॥७४॥

७१ अर्थ रहस्य, गुह्य हो नूतन हो रहेगा और गुप्तज्ञान वह ही ज्ञान है हे महाराजा जगसिंह ! क्या ज्ञान व द्ये काय और अंगार का वाहन करने का वाज्यमा पर रह विरचय रहा ।

७२ माकपुरी को लूकर उधर धन कचपुर क घर धर ल करि दिया कला दिया जगनाथ का कलकल ग अ कल महाराजा राजसिंह कहा है ।

३ राधोरो का पुत्रा कही निराल (नारद) लल जगमत्त नही करी । कि क कल जगमत्त रो व जगमत्त पुत्रा का जगमत्त रो ।

४ जो जगमत्त रह । हे कि जगमत्त पर जात निर दे चार कल-कल रा राहो वही है, जहा वही को कल निरहे जगमत्त है ।

## राज अमरसिंह राठौड़

अब मुझसे गमो क्या, हथ कर सिंधी कटार ।  
बार छड़ण बाबो नहीं होगइ जमभर पार ॥७५॥

## दुर्गादास राठौड़

जननी ! अब जेइका अबे जेइका दुरमादास ।  
मार मँडासो बोंभियो बिन धर्मो आकास ॥७६॥  
बसधूँत कहिया नोय पर रसवालो गूइका ।  
सोँपी कीपी सोष आणी आसकरम-वृत् ॥७७॥  
बारइ मासो पीइ पाँडव ही रहिया प्रजन ।  
दुरगां हेको पीइ आखत रछो न मासपत ॥७८॥

२ इस सजायतवाँजे अमरसिंह की 'गैवार' कहने के बिधे मुँह से  
ग इतना ही कहा था—बार न हो चकर कहने भी नहीं पाया था—कि  
अमरसिंह को कटार उसके तरीर में पार हो गयी ।

७६ हे माता ! कुछ अबे तो जैसा बनता जैसा कि दुर्गादास था—  
जिसके सिर पर मुँहसा रक्कर उछ पर बिना कम्मो के पावार के हो  
आकास को चाम बिचा ।

७७ महाराज अमरसिंह ने को कहा कि यह दुर्गादास बार के  
गुराँ की रक्षा करने बाधा होगा यह कबल आसकरम के बड़े दुर्गादास ने  
मूच भन्धी तरह सत्य सिद्ध कर दिया ।

७८ पाँडव भी बारह महीनों तक भय के जरे धिये रहे परन्तु  
आसकरम का बेटा दुर्गादास अब तक जीता रहा अब तक थोका दिव भी  
झिपकर नहीं रहा ।

वलुसिंह चाँपावत

वलु कहे गोपालरा सचियो हाथ मैवेस ।  
पवस्यहो पद मोड़कर आबों सों अमरेस ॥५६॥

कैतरीसिंह ( वल्लरी )

अरिषा करनाम जो न जुगुन नयसाइसु ।  
आ मोटी अबगासु रहती सिर मारु धरा ॥५७॥

कन्यासिंह

किसो अणग्रसो रैं ऊहे, आपु कथा राठोइ ।  
मो मिर ऊरै मेहने ता सिर बंधै मोइ ॥५८॥

कीरतसिंह

वन मंड ग्यागौ लील मार भया रसु पोडियो ।  
किरतो नग कोबीक नदिया गह कोभाणरै ॥५९॥

भीमसिंह

गह साग्री गहलोत कर साग्री पातल कमध ।  
मुकुन-नगारी मात भल्ली सुधारी भीरुवा ॥६०॥

७६ हे महाराज अमरसिंह ! गोराकदम का देरा बहसिंह अतिथी के साथ बहिन कहवाता है कि बाइयाही मना को पराजित करके मैं आपके पास जा रहा हूँ ।

७७ हे कैतरीसिंह ! यदि तु बलसिंह से न निवृत्ता तो मारवाड़ की भूमि के निरंतर वह लोटा कलंक (मरु के छिछे) रह जायगा ।

७८ तुनी का कहना है कि हे राठीव कन्यासिंह या अग्रिम मंदिर न बना उधर और वर विरर सुकुर बांधा जाय ।

७९—अग्रिम गरीर केन बलवारो से निवृत्त हुआ और जो बटुक-से राजपूतों को मारकर सुदूरपश्चिम में गया है, ऐसा कीरतसिंह बंदि मृत्युवाध १५५ के ममान गोरपुर के छिछे में उड़ा हुआ है ।

८०—हे भीमसिंह ! ऐसे मुकुनसिंह और राजुनाथसिंह को राजपूतों ने तुजारा तुव अग्रा बरबा बिबा ।

पहर हेरु छग पासु जड़ी रही लोनाखरी ।  
 गड में रोमारोसु भखी मचायी, भीवडा ! ॥८४॥  
 आचूणी अपराध महल न रुनी मुकनरी ।  
 पातखरी परभाव भखी रुपाही, भीवडा ! ॥८५॥  
 मुकनू पूजे पाठ, के पातल ! क्या करौ ? ।  
 सुरगापुर—म साब मेला मेस्वा भीवडै ॥८६॥

( ब ) बीकानर

राज कौघल

कमपण राज मठीनरो सन बोभो बलस्यार ।  
 बिगु फौघल मौम्या जबर बौदह भूमी—चार ॥८७॥

पदमस्तिह

भेरु पकी आबोध मोहखरै करतो मरग ।  
 सोह बमारो सोच करवोहि नातो करगुवत ! ॥८८॥

८४—जायपुर दुर्ग का द्वार एक बड़ी लक बंद रहा । है भीबसिह ! ऐसे दुर्गमें लूट रेकपेख मचायी ।

८५—जाज आचीराजको मुकमसिहकी पत्नी महलमें रोपी । है भीबसिह ! ऐसे उसी प्रमाद का प्रचारसिह की पत्नीको खूब कष्टावा ।

८६—मुकमसिह स्वर्गमें प्रतापसिहसे बात पूछता है कि है प्रताप ! कबो तुम कम आ गये ? प्रतापसिह ने उत्तर दिया कि भीबसिह ने हम दोनोंको स्वर्गमें साथ ही-साथ भेज दिया ।

८७—धवीक—बीकानरी जो कौबलजीके धटीजे थे ।

८८—है करगसिहके पुत्र ! मोहमसिहकी सलाह पर यदि तू भेज बड़ी भर भी आमा-पीसा लोचका ता तेरा सारा जीवन सोच करते ही बीकन्य ।

## कुस्तुर्गृहि

कुम्हलो पूरै बोटनै विकल्लो किम बीमाख ।।  
मो ऊमो वा पालटै भल्लै न ऊमो भाख ॥८८॥

(घ) जयपुर

## महाराजा मानासिंह

जमनी । जय, जैसा जय, जैसो मान मरह ।  
रौंदो समंद पराखियो आवल बापी हर ॥ ८९ ॥

## महाराज जयसिंह (वज्र)

घट न पाजै दहरौ मरु न मानै साह ।  
ज्येद्वहौ फिर आवयो माहुरा जयसाह ॥९१॥

## राज शैसाजी (शैसावाटी)

गोद गुलाबै घाटयै बड आया मया ।।  
पारा मसर मारणा हसल अभल्लेया ॥९२॥

८८—कुम्हल्लो पूरै बोटनै विकल्लो किम बीमाख ।।  
मो ऊमो वा पालटै भल्लै न ऊमो भाख ।।  
८९—जमनी । जय जये को जमना जय जैसा कि मरह मानसिंह वा  
जिमने जवनी कलवार मल्लु में बीबी बीर कापुछ तक राजबयोमाका बिस्तार  
किया ।

९०—गोद गुलाबै घाटयै बड आया मया ।।  
पारा मसर मारणा हसल अभल्लेया ।।  
९१—ज्येद्वहौ फिर आवयो माहुरा जयसाह ।।  
घट न पाजै दहरौ मरु न मानै साह ।।  
९२—राज शैसाजी । गोद गुलाबै घाटयै बड आया मया ।।  
पारा मसर मारणा हसल अभल्लेया ।।

९३—ज्येद्वहौ फिर आवयो माहुरा जयसाह ।।  
घट न पाजै दहरौ मरु न मानै साह ।।  
९४—राज शैसाजी । गोद गुलाबै घाटयै बड आया मया ।।  
पारा मसर मारणा हसल अभल्लेया ।।

राख सिद्धासिह (सीकर)

बोस यडा बरौ यडा, दिनों यडेरा हाय ।  
सेखायत सिबसिहमू करतव यडा न कोय ॥६३॥

साम्दत्तसिह (सेतकी)

सादूम जगरमरा सिपल बुरी बख्त ।  
राम-दुम्माई फिर गयी लुरली फिरै सुदाव ॥६४॥

जुम्हारसिह (सेतकी)

बेंगर बोंको है गुडो, रख-बोंको जूमर ।  
भेक न आगै असुर-गख भांम्या बोंब इबार ॥६५॥

जोरखरसिह (सेतकी)

पणिया पाम बखाय जोरौ माइरौ ऊरै ।  
जदिबा नगौ जडाव सानैम सवूम्यत ॥६६॥

अमरसिह (सेतकी)

सगौ ज बोंकी खेमकी, भइ बोंको अभमाख ।  
गडपत राक्यो गोइ म नबर्हीरो खाख ॥६७॥

६३—दिनौ—दिनों में जबस्मा म । बडेरा—बड़े । करतव इ—महान कार्य या पराक्रम करने में बड़ा कोई नहीं ।

६४—जगरामसिह का बेटा सिंह धरत पराक्रमी सादू बसिह बुरी बख्त है जिसके करतव देख में राम की दुम्माई फिर गयी और सुदार्थ विपत्ती फिरती है—हिन्दुआ का राज्य स्थापित हो गया और सुसज्जमाय शासक विपत्ते फिरते हैं ।

६५—बेंगर—पहाड़ । गुडो—जहाँ जुम्हारसिहका स्थान था । बख्त—अकेलेके ही । बखर—असुर अर्थात् बख्त । भांम्या—वराधित किये ।

६६—बदिबा—बड़े हैं । सवूम्यत—है सलूकसिह के पुत्र जोरावरसिह ।

६७—अभमाख—अयबसिह । राक्यो इ—जिसने नबकोठि (मारवाड़) के राजा बौन्दसिहको शरण हो ।

सुखतानसिंह

मन-पायो पायो मरग, दुषी पत्तैपुर हल्ल ।  
रहनी रे सुखतानसिंह ! गौड़ ! पण्णा दिन गल्ल ॥६८॥

सार्वर्तसिंह

कम्बियो जाम्म कीचम रजपट-हंसो रण्य ।  
सौवर्तिया सुखताकरा ! तँ कडण समरण्य ॥६९॥

(अ) प्रसीलिक

खलीक सगो

छाती ऊपर सखड़ा, माथै ऊपर पाठ ।  
बहुम्यो छग भाय्ज, कठ-पीगर रहवाट ॥१०॥  
तँ रहतो न तिम्रय ठाळी ठाम्महर-सखी ।  
वाळ्म ! हिणै बजाय ओकण हाथे ऊगला ! ॥११॥  
मामा मैगल ! सौभल्ले, वृणो न्य बायोह ।  
बोहै धूपन बाँधनी अणैतराय बायोह ॥१०२॥

१०—ह गौड़ सुखतानसिंह ! कण्डपुर पर आक्रमण हुआ और तुने मन  
पारी धनु पासी संसार में ठेरी कमा बहुत दिनों तक रहेगी ।

११ ह सुखतानसिंह के बेटे सार्वर्तसिंह ! राजपूती का रथ गहरे कीचड़में  
झँस गया है उसे निकालने में अब तू ही समर्थ है ।

१०—राजा अणैतराय के पहाँ कठ के पिंजरे में कैद किया हुआ  
राजा कदवार जबने भाठसे कदवा है कि तुम जाकर मेरे भा बेटे उसेको  
कदवा कि तुम्हारा मामा कदवार कठ के पिंजरे में पड़ा है उसकी छाती  
पर बाँधे हैं और माथे पर राह बनी है जिसपर खोला चढ़ते है ।

११—हे बाका बापि के बीर ऊगा ! जिसके बिपद में तू कदवा था  
वही जरूरी ठाळी अब तू ओक हाथ से बजा ।

१२—कजा उतर हैता है कि हे मैगल भाट ! मामा से कदवा कि हम  
तुसो बात वही जानते, किंतु कदवार बाँधकर उसके सामने अण्णराय को  
बाँधकर से आबेंगे ।

राव शिवसिंह (सीकर)

बोस घडा बरौ बडा, दिनों पडेरा होय ।  
सेलायत सियसिंहसू करतव बडा न कय ॥६३॥

सादूसिंह (सेतड़ी)

सावूम अगारमरा सिपअ बुरी बल्लय ।  
राम-हुवाई फिर गयी लुरती फिरै सुषाय ॥६४॥

सुधरसिंह (सेतड़ी)

डंगर बोको हे गुडो रण-बोको जूमर ।  
जेऊ न आगे असुर-गण भांग्य पोंच हवार ॥६५॥

जोरठरसिंह (सेतड़ी)

पखिया घाब बघाय जोरो मोडरो ऊपरै ।  
कहिया नगो नकाब सानैमें सवूमव ॥६६॥

अमरसिंह (सेतड़ी)

जगो ब बोडी सेमडी, मक बोरो अमगाछ ।  
गडपत राकबो गोद म नब ईटीरो छात्र ॥६७॥

६३—दिनां—दिनो में कबस्या में । बडेरा—बड़े । करतव हूँ—महा-  
कार्य का पराक्रम करके में बड़ा कोई बही ।

६४—अगारमसिंह का पैदा सिंह सख्य पराक्रमी बाबू बसिंह डूरी बा-  
हू जिसके कारण देश में राम की बुवाई फिर यही और सुवाई बिपरी फिर-  
है—हिन्दुओं का राज्य स्थापित हो गया और सुसज्जमान कायक वि-  
धिरत हैं ।

६५—डूबर—पहाड़ । गुडो—जहाँ सुधरसिंहका स्थान था । जेऊ-  
जोकेलेवे डी । असुर—असुर आर्षात् बलम । भांग्या—पराजित किये ।

६६—बखिया—बड़े हैं । सवूमवत हे सवूमसिंह के पुत्र जोरावर-

६७—अमगाछ—अमरसिंह । राकबो हूँ—किये बकबीरि (मा-  
के राजा बौकबसिंहको करव दो ।

# परिशिष्टरो अनुक्रमणिका

५

मकरिवाह	मुद्रवीर	१	कर्ने न जाने कथ	मु०	१३
कर्ने घनेक	मु	३२	कमपज राज मपीजरो	मु	५७
कीन्हा पाव	मु	२	करछारै वपपत फियो	वा	१३
कुटन पमीत	मु	२४	कसपै प्रकवर ! काव	मु	४२
हुट पवाह	मु	२६	कलियो जाम्म कीचमे	मु	२६
पौर न पाव	मु०	१५	कविता ! मान पवारयो	वा	१
पौर घोंवार	मु	१८	किलो घणालो यू कहे	मु	५१
कापी पाप	मु०	१७	कुछलो पुर्ब कोठरी	मु	८२
पाव घनेक	मु०	२६	केहरिवा करवात् !	मु	५
मक पवाह	मु	३७	कोठ हरव कीपी कर्ने	वा०	९
मक पवाह	मु	४५			
मक पवाह	मु	१५	कना व वाकी केउकी	मु०	२७
मक पवाह	मु	१७	कानाकान मवावरी	मु	१५
मक पवाह	मु	१६	कानाकान मवावरो कीलो	वा	७
मक पवाह	मु	४६	कानाकान मवावरो मोप	वा०	५
मक पवाह	मु	८३	कुछी हुं पौचल कमव	मु	१२
मक पवाह	वा	४			
मक पवाह	मु	३६	मक सावी महलोप	मु	५३
मक पवाह	मु	७५	मिर पुर केल मवाव	मु	९
मक पवाह	मु	८५	मोहित कुन वन वाव	मु	३६
मक पवाह	मु	२६	पीठ बुलाव माठव	मु	२२
मक पवाह	मु	४६	प्याव व ववाव	वा	४